खंड–'अ'

अध्याय — 1 (अ) अपठित गद्यांश

स्मरणीय बिंदु

अपठित गद्यांश वह गद्य खंड है जो पहले पढ़ा न गया हो। किसी भी गद्य खंड को पढ़कर स्वयं समझने और उसके अंतर्गत पूछे गए प्रश्नों के उत्तर स्वयं दे पाने की क्षमता का विकास करना ही अपठित गद्यांश को पाठ्यक्रम में रखने का उद्देश्य होता है।

सामान्य सुझाव—

- ➢ अपठित गद्यांश के प्रश्नों को हल करने के लिए सर्वप्रथम संपूर्ण गद्यांश को कम-से-कम दो बार ध्यानपूर्वक पढ़ना चाहिए।
- ➢ गद्यांश को एकाग्रता से पढ़ने के बाद उसके मूलभाव को समझना चाहिए तथा उसके बाद प्रश्नों के उत्तर का सही विकल्प चुनना चाहिए।
- ➢ गद्यांश का शीर्षक लिखते समय पूरे गद्यांश के भाव को ध्यान में रखना चाहिए, किसी एक भाव को नहीं।
- ➢ अपठित गद्यांश के शीर्षक का चयन, सार्थक एवं मूल-भाव को व्यक्त करने की क्षमता रखने वाला शब्द या शब्द समूह अथवा वाक्यांश का सही उत्तर चुनना चाहिए।

नोट—गत वर्ष की परीक्षाओं में पूछे गए प्रश्नों को सी.बी.एस.ई. प्रतिदर्श प्रश्न पत्र 2021 के पैटर्न के अनुसार संशोधित किया गया है।

अध्याय — 1 (ब) अपठित काव्यांश

स्मरणीय बिंदु

अपठित काव्यांश वह कविता या गीत है, जो पहले से न पढ़ा गया हो। किसी भी काव्यांश को बिना किसी की सहायता से पढ़ना और पढ़कर उसे समझने की प्रतिभा का विकास करना ही अपठित काव्यांश का लक्ष्य है।

सामान्य सुझाव

- ➢ सर्वप्रथम अपठित पद्यांश या काव्यांश को दो-तीन बार ध्यानपूर्वक पढ़ें।
- ➢ सभी तत्सम तथा कठिन शब्दों को समझने का प्रयास करें।
- ➢ प्रत्येक प्रश्न के उत्तर को सही विकल्पों में से चुनने का प्रयास करें।
- ➢ शीर्षक चुनते समय सम्पूर्ण काव्यांश को ध्यान में रखकर ही काव्यांश के मूल भाव (केंद्रीय भाव) का विकल्पों से चयन करें।
- ➢ शीर्षक का चयन सही व सोच समझकर ही करें।

व्याकरण—बोध

अध्याय — 1 रचना के आधार पर वाक्य भेद

स्मरणीय बिंदु

सामान्य सुझाव

- ► वाक्य भेद के नियमों को ध्यानपूर्वक समझे बिना सही उत्तर पहचानना संभव नहीं है, अत: उदाहरणों की सहायता से नियमों को समझ कर निरंतर अभ्यास करते रहें।
- ► छात्र वाक्य रूपांतरण करते समय प्राय: लिंग, काल का ध्यान नहीं रखते।
- ► छात्र मिश्र और संयुक्त वाक्यों का पर्याप्त ज्ञान न होने के करण भ्रमित होते हैं।
- ► **वाक्य**—ऐसा सार्थक शब्द-समूह जो व्यवस्थित हो तथा पूरा आशय प्रकट कर सके, वाक्य कहलाता है। उदाहरणार्थ—

श्रीकृष्ण ने धर्म की संस्थापना की।

- ► **वाक्य के अंग (घटक)**—जिन अवयवों को मिलाकर वाक्य की रचना होती है, उन्हें वाक्य के अंग कहते हैं।

वाक्य के मूल एवं अनिवार्य अंग हैं—कर्ता एवं क्रिया। इनके बिना वाक्य की रचना संभव नहीं है।

OSWAAL BOOKS LEARNING MADE SIMPLE

जैसे—(i) गीता गाएगी (ii) सोहन नाचेगा।

अतः कर्ता और क्रिया वाक्य के अनिवार्य घटक हैं। इनके अतिरिक्त वाक्य के अन्य घटक भी होते हैं।

जैसे—विशेषण, क्रिया विशेषण आदि। ये घटक ऐच्छिक घटक कहलाते हैं।

कर्ता और क्रिया पक्ष के अनुसार वाक्य के दो पक्ष होते हैं—

(i) उद्देश्य—वाक्य में जिसके बारे में कुछ कहा जाए, वही उस वाक्य का उद्देश्य है। इसके अन्तर्गत कर्ता तथा कर्ता का विस्तार (विशेषण, संबंधबोधक, भावबोधक आदि) आ जाते हैं।

(ii) विधेय—उद्देश्य के विषय में जो कुछ कहा जाए, वह 'विधेय' है। इसके अन्तर्गत क्रिया, क्रिया-विस्तार, कर्म, कर्म-विस्तार आदि आ जाता है।

उद्देश्य और विधेय के योग से ही वाक्य, संरचना के स्तर पर पूर्ण होता है तथा किसी भाव अथवा विचार को व्यक्त कर पाता है।

	उद्देश्य	विधेय
1.	सुमन	अध्यापिका है।
2.	छात्रावास में रहने वाले सभी लड़के	सिनेमा देखने जा रहे हैं।
3.	मैं	दिल्ली में रहने वाली सखी से मिली।

उद्देश्य तथा उद्देश्य का विस्तार

वाक्य	उद्देश्य	उद्देश्य का विस्तार	विधेय
1. वीर हनुमान ने लंका में आग लगा दी।	हनुमान ने	वीर	लंका में आग लगा दी।
2. तेजस्वी चाणक्य, मंत्री बनने में सफल रहा।	चाणक्य	तेजस्वी	मंत्री बनने में सफल रहा।

विधेय तथा विधेय का विस्तार

वाक्य	उद्देश्य	विधेय	विधेय का विस्तार
1. वीर हनुमान ने लंका में आग लगा दी।	वीर हनुमान ने	आग लगा दी	लंका में
2. तेजस्वी चाणक्य, मंत्री बनने में सफल रहा।	तेजस्वी चाणक्य	सफल रहा	मंत्री बनने में

वाक्य के भेद—वाक्य के भेद दो आधार पर होते हैं—

1. रचना के आधार पर
2. अर्थ के आधार पर

टिप्पणी—आपके पाठ्यक्रम में केवल रचना के आधार पर वाक्य के भेद-सम्बन्धी प्रश्न पूछे जाएँगे।

रचना के आधार पर वाक्य भेद—रचना के आधार पर वाक्य के तीन भेद होते हैं—

1. सरल वाक्य
2. संयुक्त वाक्य
3. मिश्र वाक्य

1. सरल वाक्य—जिन वाक्यों में एक ही मुख्य क्रिया होती है, उसे सरल वाक्य कहते हैं।

जैसे—**(i)** वर्षा हो रही है।
(ii) बच्चे मैदान में खेल रहे हैं।
(iii) मैं दिन-भर सोया।
(iv) उन्होंने हद पार कर दी होगी।
(v) पाकिस्तान कई वर्षों से आतंकवाद फैलाए चला जा रहा है।

उपरोक्त सभी वाक्यों में मुख्य क्रिया एक ही है। आकार में छोटे-बड़े होते हुए भी रचना की दृष्टि से ये वाक्य सरल वाक्य हैं। सरल वाक्यों को साधारण वाक्य के नाम से भी जाना जाता है।

मुख्य क्रिया के अलावा जो पद क्रिया के सहायक बनते हैं, उन्हें सहायक-क्रिया कहते हैं।

2. संयुक्त वाक्य—जब दो या दो से अधिक स्वतन्त्र उपवाक्य योजक शब्दों (समानाधिकरण समुच्चयबोधक अव्यय) द्वारा जुड़े हुए हों, उन्हें संयुक्त वाक्य कहते हैं।

जैसे— **(i)** बादल गरजे और बिजली चमकने लगी।
(ii) गंगा तट पर नहा लेना या मुँह धो लेना।
(iii) वर्षा होने वाली है इसलिए जल्दी घर आ जाना।
(iv) चुपचाप चले जाओ, नहीं तो बहुत बुरा होगा।
(v) बोलो परन्तु कटु सत्य न बोलो।
(vi) ठीक से खाओ अथवा रहने दो।

उपर्युक्त उदाहरणों में वाक्य 'या', 'इसलिए', 'नहीं तो', 'परन्तु', 'अथवा' अव्यय शब्दों से जुड़े हुए हैं। योजकों की सहायता से जुड़े होने के कारण ये संयुक्त वाक्य कहलाते हैं।

पहचान—संयुक्त वाक्य और, तथा, एवम्, इसलिए, अत:, नहीं तो, अन्यथा, वरना, या, किन्तु, परन्तु, मगर, बल्कि, फलत:, परिणामस्वरूप आदि समानाधिकरण समुच्चयबोधक से जुड़े रहते हैं। यदि इन योजकों को हटा दिया जाए, तो प्रत्येक संयुक्त वाक्य के दो-दो स्वतन्त्र वाक्य बन जाएँगे।

3. मिश्र वाक्य—जिन वाक्यों की रचना में एक प्रधान उपवाक्य तथा शेष अन्य उस पर आश्रित उपवाक्य होते हैं, उसे मिश्र वाक्य कहते हैं।

जैसे—**(i)** जब बादल गरजे तब बिजली चमकने लगी।
(ii) अध्यापक ने कहा कि कल विद्यालय बंद रहेगा।
(iii) मेरे पास एक पेन है जो पिताजी ने दिया था।
(iv) तुम ऐसे बोलो जैसे मैं बता रहा हूँ।
(v) वह इसलिए आयी थी ताकि मुझे बेवकूफ बना सके।

उपरोक्त वाक्यों में रेखांकित अंश 'प्रधान वाक्य' जबकि शेष भाग 'गौण वाक्य' हैं।

पहचान—प्राय: मिश्र वाक्य 'कि', 'जो-वह'—'वही-जिस', 'क्योंकि', जिससे, अर्थात्, ज्यों ही, जब, जैसा, जिस तरह, जैसे, जहाँ, जिधर जिस जगह, जितना, जैसे—जैसे, ताकि, यद्यपि, यदि आदि व्यधिकरण समुच्चयबोधकों से जुड़े रहते हैं।

आश्रित उपवाक्य के भेद—मिश्र वाक्य में प्रयुक्त होने वाले गौण उपवाक्य तीन प्रकार के होते हैं—

(क) संज्ञा उपवाक्य—जो उपवाक्य प्रधान वाक्य की किसी संज्ञा या संज्ञा पदबंध के स्थान पर प्रयुक्त हुआ है, उसे संज्ञा उपवाक्य कहते हैं।

जैसे—राम ने कहा कि हम लड़ाई नहीं चाहते।

टिप्पणी—'राम ने कहा' उपवाक्य के कर्म के रूप में 'हम लड़ाई नहीं चाहते' उपवाक्य प्रयुक्त हुआ है, अत: यह संज्ञा उपवाक्य है।

(ii) विशेषण उपवाक्य—जो आश्रित उपवाक्य प्रधान उपवाक्य की किसी संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता बताता है, उसे विशेषण उपवाक्य कहते हैं।

जैसे—**(i)** यह वही आदमी है जिसने तुम्हें मारा था।
(ii) यह वही छात्र है जो मुझसे पढ़ा था।

टिप्पणी—यहाँ 'जिसने तुम्हें मारा था' तथा 'जो मुझसे पढ़ा था' उपवाक्य क्रमश: आदमी तथा छात्र की विशेषता बता रहा है। विशेषण उपवाक्य का प्रारम्भ जो, जिसने, जहाँ, जिससे, जिनको, जिनके लिए आदि शब्दों से होता है।

(iii) क्रिया विशेषण उपवाक्य—जिस आश्रित उपवाक्य से प्रधान उपवाक्य की क्रिया की विशेषता पता चलती है, उसे क्रिया-विशेषण उपवाक्य कहते हैं।

जैसे—**(i)** जब तुम मुझसे मिले थे, तब मैं छोटा था।
(ii) यदि वर्षा अच्छी होगी, तो फ़सल अच्छी होगी।

टिप्पणी—रेखांकित उपवाक्य क्रमश: 'था' तथा 'होगी' उपवाक्यों में क्रमश: क्रिया होने के समय तथा क्रिया के संपन्न होने की संभावना (शर्त) संबंधी विशेषता बताई गई हैं, अत: ये क्रिया विशेषण उपवाक्य हैं।

रचनान्तरण

एक प्रकार के वाक्य को दूसरे प्रकार के वाक्य में बदलना वाक्य रचनान्तरण अथवा रूपान्तरण कहलाता है। ध्यान रखने योग्य बात यह है कि वाक्य रचना बदलनी चाहिए, किंतु अर्थ नहीं बदलना चाहिए।

रचनान्तरण करते समय वाक्य के तीनों भेदों-सरल वाक्य, संयुक्त वाक्य और मिश्र वाक्य को ध्यान में रखना होता है। संयुक्त वाक्य बनाने के लिए दो स्वतंत्र वाक्यों को किन्तु, परन्तु, अथवा, लेकिन, इसलिए, और, तथा, एवं, पर आदि समुच्चयबोधक अव्ययों के प्रयोग से जोड़ा जाता है। मिश्रित वाक्य बनाने के लिए एक प्रधान वाक्य के साथ आश्रित उपवाक्यों को जोड़ा जाता है, इसके लिए कि, क्योंकि जो, जैसे, जहाँ, जब और जिसने आदि योजकों का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार के रचनांतरण में समापिका क्रिया को असमापिका क्रिया में तथा असमापिका क्रिया को समापिका क्रिया में बदला जाता है, उदाहरणार्थ–

1. **सरल वाक्य से संयुक्त तथा मिश्र वाक्य में परिवर्तन–**
   (क) हम लोग तैरने के लिए नदी पर गए थे। (सरल वाक्य)
   (ख) हम लोगों को तैरना था इसलिए नदी पर गए थे। (संयुक्त वाक्य)
   (ग) क्योंकि हमें तैरना था इसलिए हम लोग नदी पर गए थे। (मिश्र वाक्य)
2. **मिश्र वाक्य से सरल तथा संयुक्त वाक्य में परिवर्तन–**
   (क) जैसे ही हम घर से बाहर निकले बारिश होने लगी। (मिश्र वाक्य)
   (ख) हमारे घर से बाहर निकलते ही बारिश होने लगी। (सरल वाक्य)
   (ग) हम घर से बाहर निकले और बारिश होने लगी। (संयुक्त वाक्य)
3. **संयुक्त वाक्य से सरल तथा मिश्र वाक्य में परिवर्तन–**
   (क) लालाजी ने थैला उठाया और दुकान की ओर चले गए। (संयुक्त वाक्य)
   (ख) लालाजी थैला उठाकर दुकान की ओर चले गए। (सरल वाक्य)
   (ग) जैसे ही लालाजी ने थैला उठाया, वैसे ही वह दुकान की ओर चले गए। (मिश्र वाक्य)

इस तरह के रचनांतरणों में थोड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है। विशेष रूप से सरल वाक्यों से संयुक्त तथा मिश्र वाक्य बनाते समय कुछ शब्द या संबंधबोधक अव्यय अथवा योजक आदि को अपनी ओर से जोड़ना पड़ता है। इसी तरह संयुक्त तथा मिश्र वाक्यों को सरल वाक्यों में बदलते समय योजक शब्दों या संबंधबोधक अव्यय आदि शब्दों का लोप करना पड़ता है।

अध्याय — 2 वाच्य

स्मरणीय बिंदु

सामान्य सुझाव

- वाच्य की परिभाषा, भेद एवं परिवर्तन के नियमों को ध्यानपूर्वक समझ लेना चाहिए।
- वाच्य परिवर्तन के प्रश्नों को हल करने हेतु निरंतर अभ्यास की आवश्यकता होती है। जितने अधिक वाक्यों का अभ्यास करेंगे उतना ही अधिक विश्वास से प्रश्न हल कर सकेंगे।
- वर्तनीगत अशुद्धियों का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है।
- निर्देशों का सावधानीपूर्वक पालन करें।
- पूछे गए प्रश्न का ही उत्तर दें।

वाच्य और उसके भेद

परिभाषा–क्रिया के जिस रूप से यह बोध होता है कि क्रिया का विधायक (करने वाला) कर्ता है, कर्म है या भाव है, वह वाच्य कहलाता है। जैसे–

- वह पत्र लिखता है। (कर्तृवाच्य)
- पत्र उसके द्वारा लिखा जाता है। (कर्मवाच्य)
- बच्चों से / के द्वारा दौड़ा जाता है। (भाववाच्य)

वाच्य के भेद–वाच्य के दो भेद होते हैं–

(1) कर्तृवाच्य
(2) अकर्तृवाच्य

(1) **कर्तृवाच्य**—जिस वाक्य में क्रिया का रूप कर्ता के अनुसार परिवर्तित होता है, उसे कर्तृवाच्य कहते हैं। इसमें कर्ता प्रधान होता है। जैसे—**(i)** राधा नाचती है।
(ii) लड़का रो रहा है।

(2) **अकर्तृवाच्य**—जिन वाक्यों में कर्ता प्रमुख नहीं होता है, उसे अकर्तृवाच्य कहते हैं।
अकर्तृवाच्य के दो भेद हैं-

(i) कर्मवाच्य—जिस वाक्य में क्रिया का व्यापार कर्म के साथ हो, वहाँ कर्म वाच्य होता है। कर्म की प्रधानता के कारण क्रिया का लिंग, वचन एवं पुरुष कर्म के अनुसार होते हैं। कर्ता का लोप हो जाता है या कर्ता के बाद 'से' अथवा 'के द्वारा' का प्रयोग होता है।
जैसे— **(i)** राम द्वारा पुस्तक पढ़ी जाती है।
(ii) राजा द्वारा न्याय किया गया।
(iii) रमा से / रमा द्वारा पत्र लिखा जाता है।

(ii) भाववाच्य—जिस वाक्य में कर्ता या कर्म की प्रधानता न होकर भाव की प्रधानता हो, उसे भाववाच्य कहते हैं। ऐसे वाक्यों में क्रिया सदा एकवचन, पुल्लिंग, अकर्मक तथा अन्य पुरुष में रहती है।
जैसे— **(i)** बच्चों से पढ़ा जाएगा।
(ii) मुझसे शोर में सोया नहीं जाएगा।

वाच्य परिवर्तन

कर्तृवाच्य का कर्मवाच्य में परिवर्तन—

(1) कर्तृवाच्य से कर्मवाच्य बनाते समय कर्त्ता के साथ 'से' तथा 'के द्वारा' शब्द लगाए जाते हैं। जैसे—

	कर्तृवाच्य	**कर्मवाच्य**
(i)	मोहन पत्र लिखता है।	मोहन द्वारा पत्र लिखा जाता है।
(ii)	माँ ने कपड़े धोए।	माँ द्वारा कपड़े धोए गए।

(2) कर्म के साथ लगी विभक्ति को हटा दिया जाता है।
जैसे—
(i) माला ने गुड़िया को फेंक दिया।
माला द्वारा गुड़िया फेंक दी गई।
(ii) कमलेश ने घर को साफ़ किया।
कमलेश द्वारा घर साफ़ किया गया।

(3) कर्तृवाच्य की क्रिया को सामान्य भूतकाल की क्रिया में बदल दिया जाता है और उसके काल को कर्म के वचनानुसार बदला जाता है। जैसे—
(i) मोहन पत्र लिखता है।
मोहन से पत्र लिखा जाता है **अथवा** मोहन द्वारा पत्र लिखा जाता है।
(ii) माला ने गुड़िया को फेंक दिया।
माला द्वारा गुड़िया को फेंक दिया गया।

कर्तृवाच्य से भाववाच्य में परिवर्तन—

(1) कर्त्ता के बाद 'से' अथवा 'द्वारा' लगा दिया जाता है। जैसे—
(i) छात्र पढ़ेंगे।
छात्रों से पढ़ा जाएगा **या** छात्रों द्वारा पढ़ा जाएगा।
(ii) पक्षी आकाश में उड़ते हैं।
पक्षियों से आकाश में उड़ा जाता है **या** पक्षियों द्वारा आकाश में उड़ा जाता है।

(2) मुख्य क्रिया में सामान्य भूतकाल की क्रिया को एकवचन में बदलकर 'जाना' धातु के एकवचन, पुल्लिंग, अन्य पुरुष रूप को लगा देते हैं। जैसे—
(i) छात्र पढ़ेंगे।
छात्रों से पढ़ा जाएगा **या** छात्रों द्वारा पढ़ा जाएगा।
(ii) पक्षी आकाश में उड़ते हैं।
पक्षियों से आकाश में उड़ा जाता है।

कर्मवाच्य का प्रयोग—कर्मवाक्य का प्रयोग निम्न स्थानों या रूपों में भी होता है—

1. जब निश्चित रूप से कर्ता कौन है, यह न पता हो या भयवश या संकोचवश न बताना चाहते हों। जैसे—
   पत्र लिखा जा चुका है।
   उसकी चाबी चुरा ली गई है।
2. जब कोई कार्य स्वयं किया हो, किन्तु बिना आपकी इच्छा के हुआ हो। जैसे—माला खिंची और टूट गई।
3. जब कर्ता व्यक्ति न होकर व्यवस्था हो, जैसे—
   सरकार द्वारा इस दिशा में उचित कदम उठा लिए गए हैं।
4. सूचना, विज्ञप्ति आदि में जहाँ कर्ता निश्चित न हो, जैसे—
   चौराहे पर इकट्ठा होने पर सजा दी जाएगी।
5. अधिकार या अहंकार दिखाने के लिए, जैसे—
   दोषी को कोड़े मारे जाएँ।
6. कानूनी या कार्यालयी भाषा में, जैसे—
   आपका ऋण स्वीकृत किया जाता है।
7. असमर्थता जताने के लिए, जैसे—
   मुझसे यह भारी पत्थर नहीं उठाया जाएगा।

भाववाच्य का प्रयोग—

1. असमर्थता या विवशता बताने के लिए, जैसे—
   अब नहीं खाया जाता।
2. जब 'नहीं' का प्रयोग न हो, तो मूल कर्ता जन साधारण हो,ज़ैसे—
   वर्षा में छाते का प्रयोग किया जाता है।

अध्याय — 3 पद परिचय

स्मरणीय बिंदु

सामान्य सुझाव

- विकारी पदों तथा अविकारी पदों के भेद, लिंग, कारक, वचन, पुरुष, काल, वाच्य आदि को ध्यानपूर्वक समझना चाहिए।
- सावधानीपूर्वक निर्देशित पदों का ही पद-परिचय दें।
- व्याकरणिक तथा वर्तनीगत अशुद्धियों पर अंक काटे जा सकते हैं, अत: त्रुटियों से बचने का प्रयास करें।
- पद-परिचय देते समय सही विकल्प का चुनाव करें।

पद—शब्द जब तक कोश में रहता है, शब्द कहलाता है परन्तु वाक्य में प्रयोग करने पर जब यह व्याकरणिक नियमों से आबद्ध हो जाता है, तब उसे पद कहते हैं।

पद के भेद

- **विकारी पद**
  - संज्ञा
  - सर्वनाम
  - विशेषण
  - क्रिया
- **अविकारी पद (अव्यय)**
  - क्रिया विशेषण
  - सम्बन्धबोधक
  - विस्मयादिबोधक
  - समुच्चयबोधक
  - निपात

- वाक्यों में आने वाले पदों का व्याकरणिक दृष्टि से परिचय देना पद-परिचय कहलाता है।

पद का नाम	परिचय देने के लिए आवश्यक बातें
1. विकारी (i) संज्ञा	संज्ञा के भेद (व्यक्तिवाचक, जातिवाचक, भाववाचक), वचन (एकवचन, बहुवचन), लिंग (पुल्लिंग, स्त्रीलिंग) कारक (कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण, सम्बोधन) क्रिया के साथ सम्बन्ध।
(ii) सर्वनाम	सर्वनाम के भेद (पुरुषवाचक, निश्चयवाचक, अनिश्चयवाचक, प्रश्नवाचक, निजवाचक, सम्बन्धवाचक), पुरुष (उत्तम, मध्यम, अन्य), लिंग, वचन, क्रिया के साथ सम्बन्ध।

OSWAAL BOOKS® LEARNING MADE SIMPLE

(iii) विशेषण	विशेषण के भेद (गुणवाचक, परिमाणवाचक, संख्यावाचक, सार्वनामिक), लिंग, वचन, विशेष्य।
(iv) क्रिया	क्रिया के भेद (अकर्मक, सकर्मक), लिंग, वचन, पुरुष, काल (भूत, वर्तमान, भविष्यत्), वाच्य (कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य) कर्ता, कर्म का संकेत।
2. अविकारी	
अव्यय	क्रिया विशेषण के भेद (कालवाचक, स्थानवाचक, रीतिवाचक, परिमाणवाचक) जिस क्रिया की विशेषता बता रहा हो उसका संकेत, समुच्चयबोधक, सम्बन्धबोधक, विस्मयादिबोधक, निपात, उनका सम्बन्ध।

उदाहरणार्थ—

1. **संज्ञा पद-परिचय**

   राधा कक्षा में बैठी है।

   राधा—संज्ञा, व्यक्तिवाचक संज्ञा, स्त्रीलिंग, एकवचन, कर्ता कारक, 'बैठी है' क्रिया की कर्ता।

   कक्षा—संज्ञा, जातिवाचक संज्ञा, स्त्रीलिंग, एकवचन, अधिकरण कारक, 'बैठी है' क्रिया से सम्बद्ध।

2. **सर्वनाम पद-परिचय**

   मैं खाना खाकर पढ़ूँगा।

   मैं—सर्वनाम, उत्तम पुरुष वाचक सर्वनाम, पुल्लिंग, एकवचन, कर्ता कारक, 'पढ़ूँगा', क्रिया का कर्ता।

3. **विशेषण पद-परिचय**

   नीली चुनरी धूप में सूख रही थी।

   नीली—विशेषण, गुणवाचक विशेषण, स्त्रीलिंग, एकवचन, 'चुनरी' संज्ञा की विशेषता बता रहा है।

4. **क्रिया पद-परिचय**

   लड़कियाँ बातें **कर रही हैं।**

   कर रही हैं—क्रिया, अकर्मक क्रिया, वर्तमान काल, स्त्रीलिंग, बहुवचन, कर्तृवाच्य, लड़कियाँ कर्ता की क्रिया।

5. **क्रिया-विशेषण पद-परिचय**

   आकांक्षा **धीरे-धीरे** चल रही थी।

   धीरे-धीरे—क्रिया विशेषण, रीतिवाचक, 'चल रही' क्रिया की रीति की विशेषता।

6. **सम्बन्धबोधक पद-परिचय—**भावना **के बदले** सुमन दिल्ली चली गई।

   के बदले—सम्बन्धबोधक, विनिमय वाचक, भावना और सुमन में सम्बन्ध सूचक।

7. **समुच्चयबोधक पद-परिचय—**साधना बीमार थी **इसलिए** विद्यालय नहीं आई।

   इसलिए—समुच्चयबोधक, परिणामदर्शक समानाधिकरण, साधना बीमार थी और विद्यालय नहीं आई उपवाक्यों को जोड़ने का कार्य, परिणाम स्पष्ट करना।

8. **विस्मयादिबोधक पद-परिचय—**

   वाह ! क्या दृश्य है।

   वाह—विस्मयादिबोधक, प्रसन्नतासूचक, दृश्य का प्रशंसा सूचक पद।

अध्याय — 4 अलंकार

स्मरणीय बिंदु

► **अलंकार—**अलंकार का शाब्दिक अर्थ है— आभूषण। जिस प्रकार आभूषण नारी की सुन्दरता बढ़ाते हैं, उसी प्रकार अलंकार से कविता की शोभा बढ़ती है अर्थात् शब्द तथा अर्थ की जिस विशेषता से काव्य का श्रृंगार होता है, उसे अलंकार कहते हैं। अलंकार शास्त्र में आचार्य भामह ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। वे अलंकार सम्प्रदाय के प्रवर्तक कहे जाते हैं।

► **अलंकार के भेद—**अलंकार को मुख्यत: दो भागों में बाँटा जाता है— **(i)** शब्दालंकार **(ii)** अर्थालंकार

1. **शब्दालंकार**—जो अलंकार शब्दों के माध्यम से काव्य को अलंकृत करते हैं, वे शब्दालंकार कहलाते हैं। ये वर्णगत, शब्दगत या वाक्यगत होते हैं।

   शब्दालंकार के भेद—शब्दालंकारों के मुख्यत: तीन भेद होते हैं—

   (1) अनुप्रास अलंकार,

   (2) यमक अलंकार,

   (3) श्लेष अलंकार

* **आपके पाठ्यक्रम में शब्दालंकार में से केवल श्लेष अलंकार को सम्मिलित किया गया है।**

► **श्लेष अलंकार**—श्लेष का अर्थ है—चिपका हुआ। जहाँ एक ही शब्द से कई अर्थों का बोध होता है, किन्तु शब्द एक ही बार प्रयुक्त होता है उसे श्लेष अलंकार कहते हैं। जैसे—

(अ) माया महा ठगिनि हम जानी।
तिरगुन फाँस लिए कर डोलै, बोलै मधुरी बानी।

तिरगुन— (i) रज, सत, तम नामक तीन गुण।
(ii) रस्सी (अर्थात् तीन धागों की संगत), अत: श्लेष अलंकार है।

(ब) जो रहीम गति **दीप** की कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारे लगे, बढ़े अँधेरो होय॥

'दीप' शब्द के दो अर्थ हैं—दीपक तथा संतान।
बारे = जन्म लेने पर (संतान के पक्ष में), जलाने पर दीपक के पक्ष में।
बढ़े = बड़ा होने पर, बुझा देने पर, अत: श्लेष अलंकार है।

अर्थालंकार — अर्थालंकार की निर्भरता शब्द पर न होकर शब्द के अर्थ पर आधारित होती है अर्थात् जब किसी वाक्य का सौन्दर्य उसके अर्थ पर आधारित होता है, वहाँ अर्थालंकार होता है।

► **अर्थालंकार के भेद**—अर्थालंकार के मुख्यत: पाँच भेद होते हैं—

(1) उपमा, (2) रूपक, (3) उत्प्रेक्षा (4) अतिशयोक्ति, (5) मानवीकरण।

* **आपके पाठ्यक्रम में अर्थालंकार के तीन भेदों —उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति और मानवीकरण को सम्मिलित किया गया है।**

(3) उत्प्रेक्षा अलंकार—यहाँ उपमेय में उपमान की संभावना की जाती है। इसमें मानो, जानो, जनु, मनु आदि शब्दों का प्रयोग होता है।

उदाहरण—सोहत ओढ़े पीत पट स्याम सलोने गात।
मनो नीलमनि सैल पर आतप पर्‌यो प्रभात।॥

अर्थात् श्रीकृष्ण के श्यामल शरीर पर पीताम्बर ऐसा लग रहा है मानो नीलम पर्वत पर प्रभात काल की धूप शोभा पा रही हो।

(4) अतिशयोक्ति अलंकार—जब किसी बात को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर कहा जाए तो अतिशयोक्ति अलंकार होता है।

उदाहरण—हनुमान की पूँछ में, लग न पाई आग।
लंका सगरी जरि गई, गए निशाचर भाग॥

इस पद्यांश में हनुमान की पूँछ में आग लगने के पहले ही सारी लंका का जलना और राक्षसों के भाग जाने का बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया है, अत: अतिशयोक्ति अलंकार है।

(5) मानवीकरण अलंकार—जहाँ कवि काव्य में जड़ पदार्थों, भाव या प्रकृति को मानवीकृत कर दे, वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है। जैसे—

(i) बीती बिभावरी जाग री।
अंबर पनघट में डुबो रहीं, ताराघट उषा नागरी।

यहाँ उषा (प्रात:) का मानवीकरण कर दिया गया है। उसे स्त्री रूप में वर्णित किया गया है, अत: मानवीकरण अलंकार है।

(ii) तुम भूल गए क्या मातृ प्रकृति को
तुम जिसके आँगन में खेले-कूदे,
जिसके आँचल में सोए जागे।

यहाँ प्रकृति को माता के रूप में मानवीकृत किया गया है, अत: मानवीकरण अलंकार है।

'क्षितिज' भाग-2 (अ) गद्य-खंड

अध्याय — 1 नेताजी का चश्मा

–(स्वयं प्रकाश)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय—समकालीन कहानी में महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाले कहानीकार स्वयं प्रकाश का जन्म सन् 1947 में इंदौर (मध्य प्रदेश) में हुआ। उनका बचपन राजस्थान में बीता। इन्होंने मैकेनिकल इंजीनियरिंग की पढ़ाई की, उसके बाद औद्योगिक प्रतिष्ठान में इन्हें नौकरी मिल गई, लेकिन बाद में इन्होंने नौकरी छोड़ दी व पत्रिका (वसुधा) का संपादन करने लगे। वर्तमान में ये भोपाल (मध्य प्रदेश) में रह रहे हैं।

प्रमुख रचनाएँ—बीच में विनय, आदमी जात का आदमी, आएँगे अच्छे दिन भी, संधान, ईंधन आदि इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

भाषा-शैली—इनकी भाषा आम बोलचाल की खड़ी बोली है, जिसमें तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों के साथ-साथ आगत शब्दों का भी प्रयोग किया गया है।

पाठ का सारांश

स्वयं प्रकाश जी ने अपनी कहानी 'नेताजी का चश्मा' के माध्यम से देश के करोड़ों गुमनाम नागरिकों के योगदान को उजागर किया है। इस देश के निर्माण में अपने-अपने तरीके से बड़े के साथ-साथ छोटे देशभक्त भी योगदान देते हैं। उन छोटे देशभक्तों में बच्चे भी शामिल हैं।

प्रस्तुत कहानी एक छोटे से कस्बे की कहानी है। इसी कस्बे की नगरपालिका के किसी उत्साही प्रशासनिक अधिकारी ने कस्बे के मुख्य बाज़ार के मुख्य चौराहे पर नेताजी सुभाषचंद्र बोस की एक संगमरमर की प्रतिमा लगवा दी। इस कहानी का कथानक इसी प्रतिमा के इर्द-गिर्द घूमता है।

इस प्रतिमा को बनाने का कार्य तमाम राजनीतिक एवं प्रशासनिक ऊहापोह के पश्चात् कस्बे के हाईस्कूल के ड्रॉइंग मास्टर मोतीलाल जी को सौंपा गया, जिन्होंने एक महीने में मूर्ति बनाने का विश्वास दिलाया और जब मूर्ति बनकर तैयार हुई तो लगने लगा कि यह मूर्तिकार का सफल प्रयास था। नेताजी की मूर्ति दो फुट की थी और सुन्दर थी। नेताजी सुन्दर लग रहे थे कुछ-कुछ मासूम और कमसिन। मूर्ति को देखते ही 'दिल्ली चलो' और 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा' वगैरह याद आने लगते थे। उस मूर्ति में बस एक चीज़ खटकती थी वह थी—नेताजी की आँखों का चश्मा। मूर्ति की आँखों पर संगमरमर का चश्मा नहीं था।

हालदार साहब कम्पनी के काम से इसी कस्बे से गुजरते थे। जब वे पहली बार इस कस्बे से गुजरे और पान खाने के लिए रुके तभी उन्होंने देखा कि मूर्ति पत्थर की थी, लेकिन उस पर चश्मा रियल था। हालदार साहब को कस्बे के नागरिकों की देशभक्ति की भावना का यह प्रयास अच्छा लगा, वरना देशभक्ति तो आजकल मज़ाक की चीज़ होती जा रही है। हालदार साहब जब भी कस्बे से गुजरते, चौराहे पर रुकते, पान खाते और मूर्ति को ध्यान से देखते। उन्हें हर बार मूर्ति का चश्मा बदला हुआ मिलता, कभी गोल फ्रेम वाला, कभी मोटे फ्रेम वाला, कभी चौकोर चश्मा आदि। जब हालदार साहब से न रहा गया तो उन्होंने पान वाले से चश्मे के बदलने का कारण पूछ ही लिया। पानवाले ने अपनी बत्तीसी दिखाकर कहा कि कैप्टन चश्मेवाला, चश्मा चेंज कर देता है।

हालदार साहब को समझ में आ गया कि एक कैप्टन नाम का चश्मेवाला है जिसे बगैर चश्मे के नेताजी की मूर्ति अच्छी नहीं लगती इसलिए वह अपनी छोटी-सी दुकान के गिने-चुने चश्मों में से कोई एक नेताजी की मूर्ति पर लगा देता है, लेकिन जब कोई ग्राहक आता है और उससे वैसे ही फ्रेम की माँग करता है तो वह मूर्ति पर लगा फ्रेम ग्राहक को दे देता है और नेताजी से माफी माँगते हुए उन्हें दूसरा फ्रेम पहना देता है।

हालदार साहब को यह सब बड़ा विचित्र लग रहा था। एक दिन उन्होंने पानवाले से जाकर पूछा, क्या कैप्टन चश्मेवाला नेताजी का साथी है या आजाद हिंद फौज़ का भूतपूर्व सिपाही। पानवाले ने व्यंग्य से मुस्कराकर कहा-वो लँगड़ा क्या जायेगा फ़ौज में, पागल है पागल! वो देखो आ रहा है। हालदार साहब को पानवाले द्वारा एक देशभक्त का इस तरह मज़ाक उड़ाया जाना अच्छा नहीं लगा। उन्होंने देखा एक बूढ़ा मरियल-सा लँगड़ा आदमी सिर पर गांधी टोपी और आँखों पर काला चश्मा लगाए एक हाथ में छोटी सी संदूकची और दूसरे हाथ में बाँस पर टँगे बहुत-से चश्मे लिए एक गली से निकल रहा था और एक बंद दुकान के सहारे अपना बाँस टिका रहा था। यही था कैप्टन चश्मेवाला जो फेरी लगाता था।

हालदार साहब दो साल तक अपने काम के सिलसिले में उसी कस्बे से गुजरते रहे और नेताजी की मूर्ति पर बदलते हुए चश्मे को देखते रहे। एक बार हालदार साहब ने देखा कि मूर्ति पर कोई भी चश्मा नहीं है, पानवाले से पूछने पर पता चला कि कैप्टन मर गया है। हालदार साहब उदास हो गए और सोचने लगे कि उस पीढ़ी का क्या होगा जो अपने देश के लिए सर्वस्व लुटाने वालों पर हँसती है और अपने लिए बिकने का मौका ढूँढ़ती है।

पन्द्रह दिन पश्चात् हालदार साहब पुनः उसी कस्बे से गुजरे, सोचा कि प्रतिमा के पास नहीं रुकेंगे और पान भी आगे ही खा लेंगे, पर आदत से मजबूर आँखें चौराहा आते ही मूर्ति की तरफ उठ गईं। गाड़ी से उतर कर तेज़-तेज़ कदमों से मूर्ति की तरफ़ आगे बढ़े और उसके सामने जाकर अटेंशन में खड़े हो गए। उन्होंने देखा मूर्ति पर सरकंडे से बना चश्मा लगा हुआ था, जिसे शायद बच्चों ने बनाकर मूर्ति को पहना दिया था। इतनी-सी बात पर उनकी आँखें भर आईं।

शब्दार्थ

सिलसिला—क्रम; **प्रतिमा**—मूर्ति; **लागत**—खर्चा; **उपलब्ध बजट**—खर्च करने के लिए प्राप्त धन; **ऊहापोह**—क्या करें क्या न करें इसका निर्णय न कर पाना; **स्थानीय**—उसी क्षेत्र में रहने वाला; **कसर**—कमी; **खटकना**—अखरना; **पटक देना**—जल्दी-जल्दी बनाकर देना; **बस्ट**—मुख एवं छाती के ऊपरी भाग की बनाई गई आकृति; **कमसिन**—कम उम्र; **कौतुकभरी**—विस्मय या आश्चर्ययुक्त; **रियल**—वास्तविक; **निष्कर्ष**—सार; **दरकार**—आवश्यकता; **आइडिया**—विचार; **सराहनीय**—प्रशंसनीय; **लक्षित किया**—देखा; **दुर्दमनीय**—जिसका दमन करना कठिन हो; **गुजरना**—जाना; **ठूँसा**—भरा हुआ; **गिराक**—खरीददार या ग्राहक; **प्रफुल्लता**—खुशी; **कौम**—जाति; **होम कर देना**—कुर्बान हो जाना; **ओरिजनल**—असली, वास्तविक; **द्रवित**—पिघला हुआ; **पारदर्शी**—जिसके आर-पार देखा जा सके; **अवाक् रह जाना**—आश्चर्यचकित रह जाना; **मरियल**—अत्यंत कमजोर शरीर वाला; **हृदयस्थली**—वक्ष-स्थल **अटेंशन**—सावधान; **भावुक**—भावनाओं के वशीभूत होने वाला।

अध्याय — 2 बालगोबिन भगत

–(रामवृक्ष बेनीपुरी)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय- रामवृक्ष बेनीपुरी का जन्म बिहार के मुज़फ़्फ़रपुर जिले के बेनीपुर गाँव में सन् 1899 में हुआ। बचपन में ही माता-पिता का साया इनके ऊपर से उठ गया अतः आरम्भिक जीवन बहुत संघर्षों से भरा रहा। मैट्रिक तक की पढ़ाई कर, वे स्वाधीनता आंदोलन में भाग लेने लगे। सन् 1968 में उनका देहांत हो गया।

प्रमुख रचनाएँ—'पतितों के देश में', 'चिता के फूल', 'माटी की मूरतें', 'ज़ंजीरें और दीवारें', अंबपाली आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। उनका पूरा साहित्य बेनीपुरी रचनावली के आठ खंडों में प्रकाशित है।

भाषा-शैली—बेनीपुरी जी की भाषा में तत्सम, तद्भव, उर्दू भाषाओं के साथ सामान्य बोलचाल के आंचलिक शब्दों का प्रयोग भी यथास्थान देखने को मिलता है। इसकी भाषा सरल व सहज है।

पाठ का सारांश

'बालगोबिन भगत' का बाहरी व्यक्तित्त्व सामान्य कबीर पंथियों जैसा था। उनका चेहरा सफ़ेद बालों से जगमग बना रहता। कपड़े कम पहनते थे। कमर में एक लँगोटी-मात्र और सिर पर कबीर पंथियों जैसी एक टोपी तथा ठंड के दिनों में काली कमली ऊपर से ओढ़ लेते। मस्तक पर चंदन और गले में तुलसी की माला पहने रहते।

'बालगोबिन भगत' गृहस्थ होकर भी साधु की सब परिभाषाओं में खरे उतरने वाले थे। वे कबीर को 'साहब' मानते थे, उन्हीं के गीतों को गाते तथा कबीर द्वारा बताए गए मार्ग पर चलते। लेखक को 'बालगोबिन भगत' के मधुर संगीत ने भी बहुत प्रभावित किया। कबीर के सीधे-सादे पद उनके कंठ से निकलकर सजीव हो जाते थे।

आषाढ़ की रिमझिम पड़ते ही समूचा गाँव खेत में उतर पड़ता। 'बालगोबिन भगत' भी अपने खेत में रोपनी करने के लिए उतर पड़ते और उनका कंठ मानो एक-एक शब्द को संगीत के जीने पर चढ़ाकर कुछ को स्वर्ग की ओर भेजता है और कुछ को पृथ्वी पर खड़े लोगों के कानों की ओर! भादों की अँधेरी रात में भी दादुरों की टर्र-टर्र या झिल्ली की झंकार 'बालगोबिन भगत' के संगीत को अपने कोलाहल में डुबो नहीं पाती। कार्तिक मास के आते ही बालगोबिन भगत की प्रभातियाँ शुरू हो जातीं और फाल्गुन तक चलतीं। गर्मियों में उनकी 'संझा' उमस भरी शाम को शीतल करती। जब वे घर के आँगन में आसन जमाकर बैठ जाते तो गाँव के कुछ प्रेमी भी जुट जाते। एक पद 'बालगोबिन भगत' कहते जाते, उनकी प्रेमी मंडली उसे दुहराती, तिहराती। धीरे-धीरे मन-तन पर हावी हो जाता है और एक क्षण ऐसा आता कि 'बालगोबिन भगत' खँजड़ी लिए बीच में नाच रहे होते और उसके साथ ही सबके तन और मन नृत्यशील हो उठते।

'बालगोबिन भगत' की संगीत साधना का चरम उत्कर्ष उस दिन देखा गया जिस दिन उनका बेटा मरा! वह उनका इकलौता बेटा था। 'बालगोबिन भगत' उसका अधिक ध्यान रखते थे, क्योंकि वह सुस्त और कमज़ोर था। उनका मानना था कि ऐसे लोग निगरानी और मुहब्बत के ज़्यादा हक़दार होते हैं। उन्होंने अपने पुत्र का बड़ी सादगी के साथ विवाह किया था। पतोहू बड़ी ही सुशील मिली थी। उसने पूरे घर को सँभाल लिया था। 'बालगोबिन भगत' के बेटे की मृत्यु का समाचार जब लेखक को मिला तो कौतूहलवश उनके घर गया और यह देखकर दंग रह गया कि बेटे का शव सफ़ेद कपड़े से ढका हुआ आँगन में रखा हुआ था। वो ज़मीन पर आसन लगाए गीत गाए जा रहे थे वही पुराना स्वर। पतोहू रो रही थी, जिसे गाँव की स्त्रियाँ चुप कराने की कोशिश कर रही थीं। वे पतोहू से रोने के बदले उत्सव मनाने को कहते—विरहिणी आत्मा अपने प्रेमी परमात्मा से जा मिली। इस कथन में उनका चरम विश्वास बोल रहा था।

'बालगोबिन भगत' ने पुत्र के शव को पतोहू से ही आग दिलाई। श्राद्ध की अवधि पूरी होते ही पतोहू को उसके भाई के साथ भेज दिया और कहा कि इसका दूसरा विवाह कर देना—पतोहू जाना नहीं चाहती थी—वह कहती कि बुढ़ापे में उनकी देखभाल कौन करेगा, पर उनके अटल निर्णय के आगे उसकी एक न चली।

'बालगोबिन भगत' की अंतिम विदाई भी उन्हीं के अनुरूप हुई। वे हर वर्ष गंगा स्नान के लिए जाते, करीब तीस कोस पर गंगा थी। जाने-आने में तीन-चार दिन लगते थे। इन दिनों वे उपवास रखते। इतने लंबे उपवास में भी वही मस्ती, अब बुढ़ापे में भी वही जवानी वाली टेक।

किंतु इस बार लौटे तो तबियत कुछ खराब थी। खाने-पीने के बाद भी तबियत नहीं सुधरी, लेकिन उन्होंने अपना नियम-व्रत नहीं छोड़ा। दोनों वक्त गाना, स्नान-ध्यान, खेतीबाड़ी की देखभाल; वे दिन-दिन क्षीण होते गए। आराम करने को कहते तो हँसकर टाल देते। उस दिन भी संध्या में गीत गाया, पर ऐसा लगा जैसे तार टूट गया हो और माला का एक-एक मोती बिखर गया हो। भोर में लोगों ने गीत की मधुर आवाज़ नहीं सुनी। जाकर देखा तो बालगोबिन भगत नहीं रहे, सिर्फ़ उनका शरीर पड़ा था।

शब्दार्थ

पुरवाई—पूर्व दिशा की ओर से चलने वाली हवा; **लिथड़े**—मिट्टी से सने हुए; **हलवाहा**—हल हाँकने वाला किसान; **अधरतिया**—आधी रात; **मूसलाधार वर्षा**—ज़ोर की वर्षा; **दादुर**—मेढक; **कोलाहल**—शोर; **खंजड़ी**—ढपली के ढंग का परंतु आकार में उससे छोटा वाद्ययंत्र; **निस्तब्धता**—शांति, सन्नाटा; **प्रभाती**—प्रात:काल में गाए जाने वाले गीत; **मँझोला**—न बहुत बड़ा न बहुत छोटा, बीच का; **गोरे-चिट्टे**—गौर वर्ण के; **जटाजूट**—लंबे बालों का झुंड; **कबीरपंथी**—कबीर के पंथ को मानने वाले, कबीर-पंथ में विश्वास रखने वाले; **कमली**—कंबल; **रामानंदी**—रामानंद के द्वारा अपनाया गया; **गृहिणी**—पत्नी; **पतोहू**—पुत्रवधू; **खरा उतरना**—सफल सिद्ध होना; **खरा व्यवहार रखना**—स्पष्ट व्यवहार रखना; **दो टूक कहना**—स्पष्ट कहना; **संकोच करना**—झिझकना; **खामख्वाह**—बेकार में; **कुतूहल**—जानने की इच्छा रखना; **साहब**—ईश्वर; **दरबार**—देवालय; **मुग्ध**—खुश होना; **रोपनी**—धान की रोपाई करना; **पोखर**—छोटा तालाब; **भिंडे**—टीला, मिट्टी से बना ऊँचा स्थान, चबूतरा जैसा; **टेरना**—ऊँची आवाज़ में गाना; **दाँत किटकिटाने वाली ठंड**—जोर की ठंड, जिसमें दाँत भी बज उठें; **भोर**—सूर्य निकलने से पहले का समय; **लालिमा**—लाल रंग लिए प्रकाश; **कुहासा**—कोहरा; **आवृत**—ढका हुआ; **श्रमबिंदु**—पसीने की बूँदें; **करतल**—तालियाँ; **हावी होना**—प्रभावी होना; **चरम-उत्कर्ष**—सबसे ऊपर; **बोदा**—कम समझ वाला; **साध**—कामना; **सुभग**—भद्र, सौभाग्यशालिनी; **प्रबंधिका**—प्रबंध करने वाली स्त्री।

अध्याय — 3 लखनवी अंदाज़

—(यशपाल)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय- हिंदी के प्रसिद्ध उपन्यासकारों, कहानीकारों एवं निबंधकारों में यशपाल जी का नाम उल्लेखनीय है। यशपाल जी का जन्म पंजाब के फिरोज़पुर छावनी में सन् 1903 में हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा कांगड़ा में हुई। लाहौर में आगे की पढ़ाई करते समय ये क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़ गए तथा कई बार जेल भी गए। सन् 1976 में उनकी मृत्यु हो गयी।

प्रमुख रचनाएँ—दिव्या, झूठा सच, ज्ञानदान, अमिता, पिंजरे की उड़ान आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

भाषा-शैली—उनकी रचनाओं में भाषा की स्वाभाविकता व सजीवता दिखाई देती है। उन्होंने वर्णनात्मक एवं चित्रात्मक शैली का प्रयोग किया।

पाठ का सारांश

'लखनवी अंदाज़' नामक पाठ में लेखक ने एक ऐसे नवाब साहब का वर्णन किया है जो ट्रेन के सेकंड क्लास में यात्रा करते हुए अपनी रईसी का प्रदर्शन करने के लिए खीरे में नमक-मिर्च मिलाकर उसे खाते नहीं बल्कि सूँघते हैं और सूँघकर उसे ट्रेन से बाहर फेंक देते हैं। इस कहानी के लेखक यशपाल उस सामंती वर्ग पर कटाक्ष करते हैं, जो वास्तविकता से बेख़बर एक बनावटी जीवन-शैली के आदी हैं। इस तरह के लोग जीवन के यथार्थ से दूर कल्पना की दुनिया में जीते हैं, जो अपनी रईसी का झूठा दिखावा करने में शान समझते हैं।

लेखक ने भीड़ से बचकर एकांत में नई कहानी के संबंध में सोचने और खिड़की से प्राकृतिक दृश्य देखने का आनंद लेने के लिए सेकंड क्लास का टिकट लिया। गाड़ी छूट रही थी, अत: वह दौड़कर एक डिब्बे में चढ़ गया। उसने देखा कि वहाँ एक बर्थ पर एक लखनवी नवाब पालथी मारकर बैठे हुए थे। उनके सामने तौलिए पर दो ताज़े-चिकने खीरे रखे हुए थे। लेखक को देखकर उनकी आँखों में एकांत में बाधा उत्पन्न होने का असंतोष उभर आया। लेखक ने सोचा, हो सकता है उन्हें खीरे जैसी साधारण चीज़ का शौक फरमाते देखे जाने के कारण संकोच हो रहा हो।

नवाब साहब ने लेखक की संगति के प्रति कोई उत्सुकता नहीं दिखाई इसलिए लेखक ने भी आत्म-सम्मान में उनकी ओर से दृष्टि हटा ली। लेखक यह सोचने लगा सम्भवत: नवाब साहब ने भीड़ से बचने के लिए सेकंड क्लास का टिकट लिया हो और अब शहर के ही किसी भद्र व्यक्ति द्वारा देख लिया जाना उन्हें गवारा न हो पर थोड़ी देर बाद ही नवाब साहब ने लेखक का अभिवादन करते हुए उससे खीरा खाने के लिए पूछा। लेखक को अचानक उनका भाव परिवर्तन अच्छा नहीं लगा। उसने सोचा कि वे शराफत का गुमान बनाए रखने के लिए ऐसा कर रहे हैं, अत: लेखक ने खीरा खाने से इनकार कर दिया।

नवाब साहब ने तौलिए को झाड़कर सामने बिछा लिया और दोनों खीरों को धो-पोंछकर उस पर रख लिया। उन्होंने खीरे के सिरों को काटकर झाग निकाला और फिर सावधानीपूर्वक खीरों को छीलकर फाँकों को सलीके से तौलिए पर सजा दिया। इसके बाद उन पर जीरा मिश्रित नमक और लाल मिर्च का चूर्ण छिड़क दिया। उनके हाव-भाव और जबड़ों के फड़कने से ऐसा लगा कि उनका मुख खीरे के रसास्वादन की कल्पना से भर गया है। नवाब साहब ने खीरे की ओर सतृष्ण आँखों से देखा और उसकी एक फाँक को उठाकर सूँघा और स्वाद के आनंद में पलकें मूँद लीं। उन्होंने अपने मुँह में भर आए पानी को गले से नीचे उतार लिया। इसके बाद उन्होंने खीरे की फाँक को खिड़की से बाहर फेंक दिया। इसी तरह वे सारी फाँकों को नाक के पास ले जाकर काल्पनिक रसास्वादन कर खिड़की से बाहर फेंकते गए।

सारी फाँकों को बाहर फेंककर नवाब साहब ने तौलिये से हाथ और होंठ पोंछे और गर्व से गुलाबी आँखों से लेखक की ओर देखा, मानो यह कह रहा हो कि यह है ख़ानदानी रईसों का तरीका। नवाब साहब खीरे की तैयारी और इस्तेमाल से थककर लेट गए। लेखक सोचने लगा कि यह है ख़ानदानी तहज़ीब, नफ़ासत और नज़ाकत।

लेखक सोचने लगा कि नवाब साहब के इस तरीके को सुगंध और स्वाद की कल्पना से संतुष्ट होने का सूक्ष्म, बढ़िया और अमूर्त तरीका तो माना जा सकता है, परंतु इससे उदर की तृप्ति नहीं हो सकती। नवाब साहब ने डकार लेकर बताया कि खीरा स्वादिष्ट तो होता है पर आसानी से पचता नहीं। नवाब साहब की बात सुनते ही लेखक के ज्ञान-चक्षु खुल गए। उसने सोचा जब खीरे की सुगंध और स्वाद की कल्पना से पेट भर सकता है और डकार आ सकती है, तो बिना विचार, घटना और पात्रों के लेखक की इच्छा मात्र से नई कहानी क्यों नहीं बन सकती ?

शब्दार्थ

मुफ़स्सिल—केंद्रीय स्थान और उसके आसपास का स्थान, स्थानीय; **उतावली**—बेचैनी; **प्रतिकूल**—विपरीत; **निर्जन**—खाली स्थान; **एकांत-चिंतन**—अकेले में सोचना; **विघ्न**—बाधा; **अपदार्थ-वस्तु**—सामान्य-चीज; **आत्मसम्मान**—स्वाभिमान; **आँखें चुराना**—बचने का प्रयास; **खाली बैठना**—कुछ काम न करना; **किफ़ायत**—मितव्ययता, कम खर्च करना; **गवारा न होना**—स्वीकार न होना; **कनखियाँ**—तिरछी नज़र से देखना; **गौर करना**—ध्यान देना; **आदाब अर्ज़**—अभिवादन करना; **भाव-परिवर्तन**—भाव (विचारों) में परिवर्तन; **भाँप लेना**—समझ जाना; **शराफ़त**—सज्जनता, शालीनता; **गुमान**—घमंड; **लथेड़ लेना**—ज़बरदस्ती सम्मिलित करना; **किबला**—आप (सम्मानसूचक शब्द); **दृढ़ निश्चय**—मजबूत विचार; **एहतियात**—सावधानी; **करीने से**—अच्छी तरह से सजाना; **बुरकना**—छिड़कना; **भाव-भंगिमा**—चेहरे के हाव-भाव; **स्फुरण**—फड़कना, हिलना; **प्लावित होना**—पानी भर जाना; **असलियत**—वास्तविकता, सचमुच; **वल्लाह**—कसम से; **पनियाती**—पानी छोड़ती; **मुँह में पानी आना**—जी ललचाना; **तलब महसूस होना**—इच्छा करना; **सतृष्ण**—इच्छा सहित; **दीर्घ-निश्वास**—लंबी श्वास; **पलकें मूँदना**—आँखें बंद कर लेना।

अध्याय — 4 एक कहानी यह भी

–(मन्नू भंडारी)

लेखिक-परिचय

जीवन-परिचय— हिंदी साहित्य की सुप्रसिद्ध कहानीकार मन्नू भंडारी का जन्म 3 अप्रैल, 1931 को भानपुरा, ज़िला मंदसौर मध्यप्रदेश में हुआ था। इन्होंने अपनी इण्टरमीडिएट तक की शिक्षा अजमेर में प्राप्त की और बनारस विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की। कुछ समय तक इन्होंने कोलकाता में अध्यापन कार्य भी किया। बाद में मन्नू जी ने दिल्ली में स्थित मिरांडा हाउस में अध्यापन करते हुए वहीं से सेवानिवृत्ति भी प्राप्त की। वर्तमान में दिल्ली में रहकर स्वतंत्र लेखन कर रही हैं। इनकी साहित्यिक उपलब्धियों के लिए इन्हें हिंदी साहित्य अकादमी का 'शिखर सम्मान' प्राप्त हुआ। इसके साथ ही इन्हें नाट्य अकादमी तथा उत्तर प्रदेश हिंदी-संस्थान द्वारा भी पुरस्कृत किया गया।

प्रमुख रचनाएँ— 'एक प्लेट सैलाब', 'मैं हार गई', 'आँखों देखा झूठ', 'यही सच है' और 'त्रिशंकु' इनके कहानी संग्रह हैं। 'आपका बंटी' और 'महाभोज' इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं। इनके अतिरिक्त इन्होंने रजनी, स्वामी, निर्मला, दर्पण आदि फिल्म व टेलीविज़न धारावाहिकों के लिए पटकथाएँ भी लिखीं।

भाषा-शैली— मन्नू भंडारी की शैली सरल, सहज तथा भावाभिव्यक्ति में सक्षम है। इनकी रचनाओं के संवाद तथा वाक्य छोटे-छोटे और प्रसंगानुकूल हैं। इनकी कहानियों और उपन्यासों में भाषा और शिल्प की सादगी तथा प्रामाणिक अनुभूति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इन्होंने अपनी रचनाओं में बोलचाल की भाषा में हिंदी के साथ-साथ अंग्रेज़ी, देशज तथा उर्दू के शब्दों का भी मुक्तहस्त से प्रयोग किया है।

पाठ का सारांश

'एक कहानी यह भी' मन्नू भंडारी द्वारा आत्मपरक शैली में लिखी हुई एक 'आत्मकथा' है। प्रस्तुत आत्मकथा में बड़े ही प्रभावशाली ढंग से उन व्यक्तियों और घटनाओं का वर्णन किया गया है जिन्होंने उनके व्यक्तित्व निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

अजमेर के ब्रह्मपुरी मोहल्ले में दो मंज़िला मकान की ऊपरी मंज़िल पर लेखिका के पिता या तो कुछ पढ़ते रहते थे या डिक्टेशन देते रहते। लेखिका का कहना है कि उनकी माँ अनपढ़ थीं। वे सबकी इच्छाओं और पिताजी की आज्ञाओं का पालन करने के लिए सदैव तत्पर रहती थीं। लेखिका के पिताजी पहले इंदौर में रहते थे। समाज-सुधार के कार्यों से जुड़े रहने के कारण उनका बड़ा मान-सम्मान था। वे बहुत कोमल और संवेदनशील होने के साथ-साथ क्रोधी और अहंवादी भी थे। उन्होंने अपने अहम् के कारण ही अपने बच्चों को अपनी आर्थिक विवशताओं का भागीदार नहीं बनाया। अपनों के हाथों मिले विश्वासघात ने उन्हें बेहद शक्की बना दिया था।

लेखिका के व्यक्तित्व में पिताजी की अनेक अच्छाइयों और बुराइयों ने प्रवेश पा लिया था। बचपन में लेखिका दुबली और मरियल-सी थीं। इसलिए उनके पिताजी उनकी बड़ी और गोरी बहन सुशीला की खूब प्रशंसा करते, जिससे मन्नू के भीतर गहराई में हीन-भावना की ग्रंथि ने जन्म ले लिया था। आज अपने खंडित विश्वासों की व्यथा के नीचे उन्हें पिताजी के शक्की स्वभाव की झलक दिखलाई देती है, पर लेखिका की अनपढ़ माँ पिताजी के ठीक विपरीत थीं। उनमें धरती से भी ज़्यादा धैर्य और सहन-शक्ति थी। वे पिताजी की हर ज़्यादती को अपना प्राप्य और बच्चों की हर उचित-अनुचित फ़रमाइश को अपना कर्त्तव्य समझती थीं। परन्तु उनका विवशता भरा त्याग लेखिका का आदर्श न बन सका।

लेखिका का कहना है कि मैं पाँच भाई-बहनों में सबसे छोटी हूँ। अपने से दो साल बड़ी बहन सुशीला के साथ मैंने घर के बड़े आँगन में बचपन के सारे खेल खेले तथा गुड़ियों के ब्याह भी रचाए। भाइयों के साथ गिल्ली-डंडा भी खेला, पर हमारी सीमा घर तक ही थी बाहर नहीं। मोहल्ले के किसी भी घर में जाने पर कोई पाबंदी नहीं थी। लेखिका की दर्जन भर कहानियों के पात्र इसी मोहल्ले के हैं। इतने वर्षों के अन्तराल ने भी उनकी भाव-भंगिमा, भाषा, किसी को भी धूमिल नहीं किया।

सन् 1944 में सुशीला के सोलह वर्ष की होने व मैट्रिक उत्तीर्ण करने के पश्चात् उसका विवाह हो गया। दोनों बड़े भाई भी आगे की पढ़ाई के लिए बाहर चले गए। उस समय मुझे नए सिरे से अपने वजूद का एहसास हुआ। पिताजी का ध्यान मुझ पर केंद्रित रहने लगा। वे मुझे रसोई से दूर रखना चाहते थे। वे रसोई को भटियारखाना कहते थे जहाँ प्रतिभा नष्ट हो जाती है। घर में आए दिन राजनितिक जमावड़े होते तो पिताजी मुझे वहाँ बैठकर यह जानने के लिए कहते, कि हमारी बातें सुनो और जानो कि चारों ओर देश में क्या हो रहा है।

सन् 1945 में दसवीं पास करके मैं सावित्री गर्ल्स हाई स्कूल की 'फर्स्ट ईयर' कक्षा में पहुँच गई। वहाँ हिंदी की अध्यापिका शीला अग्रवाल ने साहित्य की दुनिया से मेरा परिचय करवाया। खुद चुन-चुन कर मुझे पढ़ने के लिए किताबें दीं, तब मैंने प्रेमचन्द, शरत चन्द्र, जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल आदि की पुस्तकें पढ़ीं। आगे चलकर मेरा साहित्य का दायरा बढ़ता चला गया।

शीला जी ने स्वतंत्रता-आन्दोलन में मुझे सक्रिय भागीदार बनाया। मैं भी प्रभात-फ़ेरियाँ, जुलूस, भाषणों आदि से जोश-खरोश के साथ जुड़ गई। घर के बाहर चलने वाले क्रिया-कलापों को पिताजी बर्दाश्त नहीं कर पा रहे थे और मेरे लिए सारे निषेध, वर्जनाएँ ध्वस्त हो चुकी थीं। कॉलेज

से मेरी अनुशासनहीनता की शिकायतें आने लगीं, पिताजी यह सुनकर बहुत नाराज़ हुए पर कॉलेज की प्रिंसीपल से मिलकर लौटने के पश्चात् बड़े खुश हुए कि मेरा कॉलेज की लड़कियों पर रौब चलता है। आज़ाद-हिंद फौज़ के मुकदमे के सिलसिले में हड़ताल का आह्वान होने पर अजमेर का पूरा विद्यार्थी वर्ग बाज़ार के चौराहे पर इकट्ठा हुआ, वहाँ दिए गए भाषण के खिलाफ़ पिताजी के किसी दकियानूसी मित्र ने उन्हें मेरे भाषण के विरुद्ध भड़का दिया पर शहर के प्रतिष्ठित डॉ. अंबालाल जी ने जब मेरे भाषण की बहुत प्रशंसा की तो, पिताजी के चेहरे पर गर्व छा गया।

सन् 1947 में मई के महीने में लड़कियों को भड़काने और अनुशासन बिगाड़ने के आरोप में शीला अग्रवाल को कॉलेज वालों ने नोटिस दे दिया। जुलाई में, थर्ड-ईयर की क्लासेज बंद करके हम दो-तीन छात्राओं का प्रवेश निषिद्ध कर दिया गया। हम सभी ने बाहर रहकर इतना हुड़दंग मचाया कि अगस्त में थर्ड-ईयर खोलना पड़ा। परन्तु वह जीत की खुशी शताब्दी की सबसे बड़ी उपलब्धि 15 अगस्त, 1947 की खुशी स्वतंत्रता मिलने के सामने हल्की पड़ गई।

शब्दार्थ

निहायत—पूरी तरह से; **दरियादिली**—परोपकार की उत्कृष्ट भावना; **अहंवादी**—घमंडी; **भग्नावशेष**—खंडहर, टूटे-फूटे हिस्से; **बल-बूते पर**—सामर्थ्य पर; **अर्थ**—धन (पाठ के आधार पर); **विस्फ़ारित होना**—बढ़ाना और अधिक फैलाना। **हाशिए पर**—ताक पर, किनारे पर; **यातना**—कष्ट; **आँखें मूँदकर**—बिना सोचे-समझे, अंधविश्वास करना; **चपेट में आना**—दबाव में आना; **ग्रंथि**—गाँठ; **तुक्के से**—भाग्य से; **भन्ना जाना**—झुंझला जाना; **ज़्यादती**—अत्याचार; **दायरा**—सीमा; **विच्छिन्न करना**—अलग-अलग कर देना; **आक्रांत**—भयभीत; **दमखम से**—पूरी ताकत से; **निषिद्ध**—प्रतिबंधित, जिस पर रोक हो; **वर्चस्व**—प्रभाव; **आग-बबूला होना**—बहुत अधिक क्रोधित होना; **कहर बरपना**—बहुत बड़ी मुसीबत आ पड़ना; **अवाक्**—मौन; **दकियानूसी**—पिछड़ी और छोटी मानसिकता; **आग लगाना**—भड़काना; **थू-थू करना**—अपमानित करना; **अंतरंग**—आत्मीय; **संकोच**—शर्म; **चिर-प्रतीक्षित**—लंबे समय से जिसका इंतज़ार हो; **बिला जाना**—समाहित हो जाना, समा जाना।

अध्याय — 5 नौबतखाने में इबादत

—(यतीन्द्र मिश्र)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय—युवा साहित्यकार यतींद्र मिश्र का जन्म उत्तर प्रदेश के अयोध्या जिले में सन् 1977 में हुआ था। इन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से हिंदी विषय में एम. ए किया। सन् 1999 से यह साहित्य और कलाओं के संवर्धन और अनुशीलन के लिए 'विमला देवी' फांउडेशन नामक एक सांस्कृतिक न्यास का संचालन कर रहे हैं। वर्तमान समय में यह एक स्वतंत्र लेखन के साथ-साथ 'सहित' नामक अर्द्धवार्षिक पत्रिका का संपादन भी कर रहे हैं।

रचनाएँ—अयोध्या तथा अन्य कविताएँ, यदा-कदा, ड्योढ़ी पर आलाप, गिरिजा।

संपादन—द्विजदेव की ग्रंथावली (सहसंपादक), थाती (संपादन)

भाषा-शैली—इनकी भाषा खड़ी बोली का परिमार्जित रूप व सहज, प्रवाहमयी भावाभिव्यक्ति में सक्षम तथा प्रसंगों के अनुकूल है। इन्होंने अपनी रचनाओं में बोलचाल के उर्दू शब्दों के साथ तत्सम व देशज शब्दों का बहुलता से प्रयोग किया है।

पाठ का सारांश

यतीन्द्र मिश्र जी ने यहाँ प्रस्तुत व्यक्ति चित्र 'नौबतखाने में इबादत' में प्रसिद्ध शहनाई वादक बिस्मिल्ला खाँ के परिचय के साथ-साथ उनकी रुचियों, संगीत साधना एवं लगन को संवेदनशील भाषा में व्यक्त किया है।

बिस्मिल्ला खाँ के बचपन का नाम अमीरुद्दीन था। उनका जन्म डुमराँव, (बिहार) के एक संगीत प्रेमी परिवार में हुआ था। 5-6 वर्ष की उम्र में ही अमीरुद्दीन अपने बड़े भाई शम्सुद्दीन के साथ अपनी ननिहाल काशी में आ गए। अमीरुद्दीन और शम्सुद्दीन के दोनों मामा सादिक हुसैन व अलीबख्श देश के जाने-माने शहनाई वादक रहे हैं। रोजनामचे में काशी का बालाजी का मन्दिर सबसे ऊपर आता है। हर दिन की शुरुआत वहीं ड्योढ़ी पर होती है। यह अलीबख्श के घर का खानदानी पेशा है। बालाजी के उसी पुराने मन्दिर में बिस्मिल्ला खाँ को नौबतखाने रियाज़ के लिए जाना पड़ता है। मन्दिर जाने का रास्ता रसूलनबाई और बतूलनबाई के यहाँ से होकर जाता है। इस रास्ते

से बिस्मिल्ला खाँ को जाना अच्छा लगता है। अपने अनेक साक्षात्कारों में बिस्मिल्ला खाँ साहब ने स्वीकार किया है कि उन्हें अपने जीवन के आरम्भिक दिनों में संगीत के प्रति आसक्ति इन्हीं गायिका बहनों को सुनकर मिली। उनकी अबोध उम्र में अनुभव की स्लेट पर संगीत प्रेरणा की वर्णमाला रसूलनबाई और बतूलनबाई ने उकेरी।

शहनाई की मंगल-ध्वनि के नायक बिस्मिल्ला खाँ ने जीवनपर्यन्त सच्चे सुर की तलाश की। पाँचों वक्त की नमाज़ इसी सच्चे सुर की प्रार्थना में खर्च की। उन्हें यह विश्वास था कि खुदा उनकी मुराद ज़रूर पूरी करेगा।

बिस्मिल्ला खाँ और शहनाई के साथ जिस एक मुस्लिम पर्व का नाम जुड़ा है वह मुहर्रम है। बिस्मिल्ला खाँ के खानदान का कोई भी व्यक्ति मुहर्रम के दिनों में न तो शहनाई बजाता है और न ही संगीत के कार्यक्रम में भाग लेता है। आठवीं तारीख को खाँ साहब खड़े होकर शहनाई बजाते तथा आठ किलोमीटर दूर पैदल नौहा बजाते जाते।

इस दिन कोई राग नहीं बजता, इस दिन राग-रागनियों की अदायगी का निषेध है। एक बड़े कलाकार का सहज मानवीय रूप ऐसे अवसर पर आसानी से दिख जाता है।

कभी-कभी बिस्मिल्ला खाँ सुकून के क्षणों में रियाज़ को कम; अपने जवानी के जुनून को अधिक याद करते हैं। अपने अब्बाजान और उस्ताद को कम; कुलसुम हलवाइन की कचौड़ी वाली दुकान व गीताबाली और सुलोचना को अधिक याद करते हैं। कैसे सुलोचना उनकी पसंदीदा हीरोइन रही थी? बड़ी रहस्यमय मुस्कराहट के साथ गालों पर चमक आ जाती है। सुलोचना की नई फिल्म सिनेमा हाल में आते ही बिस्मिल्ला खाँ साहब अपनी कमाई लेकर फिल्म देखने चल पड़ते थे। अपनी वो कमाई जो बालाजी मन्दिर पर रोज शहनाई बजाने पर उन्हें मिलती। अपने मज़हब के प्रति अत्यधिक समर्पित उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ की श्रद्धा काशी विश्वनाथ जी के प्रति भी अपार थी। वे जब भी काशी से बाहर रहते हैं तब विश्वनाथ व बालाजी मन्दिर की दिशा की ओर मुँह करके बैठते। थोड़ी देर ही सही, मगर उसी ओर शहनाई का प्याला घुमा दिया जाता और भीतर की आस्था रीड के माध्यम से बजती।

अक्सर खाँ साहब कहते हैं, क्या करें मियाँ, इस काशी को छोड़कर कहाँ जायें, गंगा मैया यहाँ, बाबा विश्वनाथ यहाँ, बालाजी का मन्दिर यहाँ, यहाँ हमारे खानदान की कई पुश्तों ने शहनाई बजाई है। जिस जमीन ने हमें तालीम दी, जहाँ से अदब पाई वो और कहाँ मिलेगी? शहनाई और काशी से बढ़कर कोई जन्नत नहीं, इस धरती पर हमारे लिए। बिस्मिल्ला खाँ सादगी पसंद और वास्तविक अर्थ में एक सच्चे इंसान थे। किसी दिन एक शिष्या ने डरते हुए खाँ साहब से कहा—"बाबा! आप यह क्या करते हैं, इतनी प्रतिष्ठा है आपकी। अब तो आपको भारत-रत्न भी मिल चुका है, फटी तहमद न पहना करें।" तब खाँ साहब ने मुस्कराकर कहा—"धत्! पगली ई भारत-रत्न हमको शहनाई पे मिला है, लुँगिया पे नाहीं।" उनका मानना था कि लुँगिया का क्या है? आज फटी है, तो कल सी जाएगी।" बस मालिक से यही दुआ है कि वह फटा सुर न बख्शें।

सन् 2000 की बात है काशी पक्का महाल से जैसे मलाई बरफ गया, संगीत, साहित्य और अदब की बहुत सारी परंपराएँ लुप्त हो गईं। एक सच्चे सुर साधक और सामाजिक व्यक्ति की भाँति बिस्मिल्ला खाँ साहब को इन सबकी कमी खलती है। काशी में जिस तरह बाबा विश्वनाथ और बिस्मिल्ला खाँ एक-दूसरे के पूरक हैं, उसी प्रकार मुहर्रम-ताजिया और होली-अबीर-गुलाल की, गंगा-जमुनी संस्कृति भी एक-दूसरे के पूरक रहे हैं।

काशी आनंदकानन है। सबसे बड़ी बात है कि काशी के पास उस्ताद बिस्मिल्ला खाँ जैसा लय और सुर की तमीज़ सिखाने वाला नायाब हीरा रहा, जो हमेशा से दो क़ौमों को एक होने व आपस में भाईचारे के साथ रहने की प्रेरणा देता रहा।

भारत-रत्न से लेकर अनेक विश्वविद्यालयों की मानद उपाधियों से अलंकृत व संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार एवं पद्मविभूषण जैसे सम्मानों से नहीं, बल्कि अपनी अजेय संगीत यात्रा के लिए बिस्मिल्ला खाँ साहब भविष्य में हमेशा संगीत के नायक बने रहेंगे। उन्होंने पूरे अस्सी वर्ष तक संगीत को संपूर्ण व एकाधिकार से सीखने की जिजीविषा को अपने अंदर सँजोए रखा। 21 अगस्त, सन् 2006 को खाँ साहब ने संगीत रसिकों की हार्दिक सभा से विदाई ले ली।

शब्दार्थ

ड्योढ़ी—दहलीज़; **नौबतखाना**—प्रवेश द्वार के ऊपर मंगल-ध्वनि बजाने का स्थान; **रियाज़ करना**—अभ्यास करना (शहनाई बजाने का); **इबादत**—प्रार्थना; **वाज़िब**—उचित; **रियासत**—जागीरदारी; **मसलन**—अर्थात्; **आसक्ति**—लगाव; **परिवेश**—वातावरण; **प्रतिष्ठित**—सम्मानित; **नेमत**—ईश्वरीय देन; **सजदा**—सिर झुकाकर ईश्वर को नमस्कार करना; **तासीर**—प्रभाव; **मेहरबान**—दयालु; **मुराद**—मनोकामना, इच्छा; **ऊहापोह**—उठा-पटक, अनिश्चितता। **तिलिस्म**—जादू **अज़ादारी**—नमाज अदा करना; **शिरकत करना**—सम्मिलित होना; **निषेध**—रोक; **शहादत**—बलिदान; **पुनर्जीवित**—दोबारा जीवित होना; **गमज़दा**—दु:खों से भरा हुआ; **सुकून**—शांति; **बाल-सुलभ**—बच्चों के समान; **नैसर्गिक**—प्राकृतिक; **आँखें चमकना**—बहुत अधिक खुश होना; **मेहनताना**—पारिश्रमिक; **आरोह-अवरोह**—स्वर में उतार-चढ़ाव; **उत्कृष्ट**—श्रेष्ठ; **मज़हब**—धर्म; **अपार**—अधिक; **आस्था**—विश्वास; **पुश्तें**—पीढ़ियाँ **तालीम**—शिक्षा; **जन्नत**—स्वर्ग; **तहज़ीब**—तमीज, अच्छा व्यवहार; **ग़म**—दु:ख; **परवरदिगार**—परमेश्वर, अल्लाह; **नसीहत**—चेतावनी; **साज**—वाद्य यंत्र; **बख्शना**—प्रदान करना; **लुप्त होना**—गायब हो जाना; **अफ़सोस**—दु:ख; **अलंकृत**—सुशोभित; **जिजीविषा**—जीने की इच्छा।

अध्याय — 6 संस्कृति

–(भदन्त आनन्द कौसल्यायन)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय—भदंत आनंद कौसल्यायन का जन्म सन् 1905 में पंजाब में अंबाला ज़िले के सोहना गाँव में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद ये बौद्ध धर्म अपनाकर बौद्ध बन गए। बौद्ध भिक्षु के रूप में भ्रमण करते हुए इन्होंने हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास के लिए अनेक प्रयास किए। सन् 1988 में इनका देहावसान हो गया।

रचनाएँ—भिक्षु के पात्र, जो भुला ना सका, आह, ऐसी दरिद्रता, बहानेबाजी, यदि बाबा ने होते, रेल का टिकट, कहाँ क्या देखा।

भाषाशैली—कौसल्यायन जी की भाषा सरल, स्पष्ट एवं भावाभिव्यक्ति में सक्षम है। इनकी रचनाओं में बोलचाल के शब्दों के साथ-साथ उर्दू शब्दों का प्रयोग भी दिखाई देता है। इन्होंने वर्णनात्मक और आत्मकथात्मक शैलियों का बहुत ही सुन्दर प्रयोग किया है।

पाठ का सारांश

'संस्कृति' नामक निबन्ध में भदन्त आनन्द कौसल्यायन जी ने संस्कृति और सभ्यता की विस्तृत व्याख्या की है। प्रस्तुत निबन्ध हमें सभ्यता और संस्कृति से जुड़े अनेक जटिल प्रश्नों को हल करने की प्रेरणा देता है।

लेखक ने बताया है कि सभ्यता और संस्कृति दो ऐसे शब्द हैं जिनका उपयोग सबसे अधिक होता है, परन्तु ये शब्द सबसे कम समझ में आते हैं। इन शब्दों के साथ जब अनेक विशेषण लग जाते हैं तब उनका थोड़ा बहुत अर्थ समझ में आता है। कल्पना कीजिए कि जिस व्यक्ति ने सर्वप्रथम आग का आविष्कार किया होगा वह कितना बड़ा आविष्कारकर्त्ता होगा। इसी तरह जिस व्यक्ति ने पहले सोचा होगा कि लोहे के टुकड़े से घिस कर उसके एक सिरे को छेदकर उसमें धागा पिरोकर कपड़े के टुकड़ों को जोड़ा जा सकता है। वह भी कितना बड़ा आविष्कारकर्त्ता होगा।

किसी व्यक्ति विशेष की संस्कृति द्वारा जो आविष्कार हुआ अर्थात् जो चीज़ उसने अपने तथा दूसरों के लिए अविष्कृत की, उसका नाम है सभ्यता। जिस व्यक्ति में योग्यता और प्रवृत्ति जितनी अधिक व जैसी परिष्कृत मात्रा में होगी वह उतना ही अधिक परिष्कृत आविष्कार करेगा। जिस व्यक्ति की बुद्धि या विवेक ने किसी भी नये तथ्य का दर्शन किया वह व्यक्ति ही वास्तविक व्यक्ति होगा। उसकी संतान को अपने पूर्वज से वह वस्तु अनायास मिल जाती है, उससे वह अपने पूर्वज की भाँति सभ्य भले ही बन जाए सुसंस्कृत नहीं कहला सकता। आज के भौतिक विज्ञान का विद्यार्थी न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्त के साथ और भी अनेक बातों से परिचित है। इस कारण हम उसे न्यूटन की अपेक्षा अधिक सभ्य भले ही कह सकें, पर न्यूटन जितना सुसंस्कृत नहीं कह सकते।

मानव संस्कृति के माता-पिता क्या भौतिक प्रेरणा और ज्ञानेप्सा ये दो ही हैं, फिर कोई दूसरे के मुँह में कौर डालने के लिए अपने मुँह के कौर क्यों छोड़ देता है। माता अपने रोगी बच्चे को गोद में लिए सारी रात क्यों बैठी रहती है? कार्ल मार्क्स ने संसार के मजदूरों को सुखी देखने के लिए सारा जीवन दु:ख में बिता दिया। सिद्धार्थ ने अपना घर इसलिए त्याग दिया ताकि तृष्णा के वशीभूत लड़ती-कटती मानवता सुखपूर्वक रह सके।

सभ्यता संस्कृति का परिणाम है। हमारे खाने-पीने, ओढ़ने-पहनने के तरीके, आवागमन के साधन, परस्पर कट मरने के तरीके यही सब हमारी सभ्यता है। मानव की जो योग्यता आत्म-विनाश के साधनों का आविष्कार कराती है, उसे उसकी संस्कृति कहें या असंस्कृति? आत्म-विनाश के साधनों को सभ्यता समझ लें या असभ्यता? संस्कृति का यदि कल्याण की भावना से नाता टूट जाएगा तो वह असंस्कृति होगी तथा ऐसी संस्कृति का परिणाम असभ्यता होगी।

हम अनेक बार संस्कृति और सभ्यता के खतरे में होने की बात भी सुनते हैं, हम अपने देश में हिन्दू सभ्यता और संस्कृति के खतरे की बात भी सुनते हैं। हम मुस्लिम न तो हिन्दू संस्कृति को समझते हैं और न ही 'मुस्लिम संस्कृति' को यह क्या बला है। हिन्दुओं और मुस्लिमों की संस्कृति तो समझ में आती है।

हिन्दू संस्कृति में भी फिर भी 'प्राचीन संस्कृति' और 'नवीन संस्कृति' का बँटवारा मौजूद है। वर्ण व्यवस्था के नाम पर समाज के बड़े कर्मठ हिस्से को पददलित रखना ही कुछ लोगों की दृष्टि में प्राचीन हिन्दू संस्कृति है। वे उसी की रक्षा के लिए स्वराज की स्थापना चाहते हैं।

संस्कृति के नाम से जिस कूड़े-करकट के ढेर का बोध होता है, वह न संस्कृति है और न ही रक्षणीय वस्तु। नए तथ्यों के दर्शन के लिए दलबंदियों की ज़रूरत नहीं है। मानव संस्कृति एक अविभाज्य वस्तु है और उसमें जितना कल्याण का अंश है वही श्रेष्ठ और स्थायी है।

शब्दार्थ

आध्यात्मिक—आत्मा से संबंधित; **साक्षात्**—प्रत्यक्ष, आँखो के सामने; **परिष्कृत**—शुद्ध। **अनायास**—बिना किसी प्रयास के, सहज; **कदाचित**—शायद; **शीतोष्ण**—ठंडा और गरम; **निठल्ला**—कामचोर; **स्थूल**—मोटा; **मनीषि**—विद्वान; **वशीभूत होना**—वश में होना, अधीन होना; **ज्ञानेप्सा**—ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा; **भाग्य-विधाता**—भाग्य बनाने वाला (ईश्वर); **तृष्णा**—प्यास, चाह, ललक, इच्छा; **गमना-गमन**— आवागमन, आना और जाना; **अवश्यंभावी**—निश्चित; **बोध**—ज्ञान; **रक्षणीय**—रक्षा करने योग्य; **अविभाज्य**—जिसे बाँटा न जा सके।

'क्षितिज' भाग-2 (ब) काव्य-खंड

अध्याय — 1 पद

–(सूरदास)

कवि-परिचय

जीवन-परिचय—भक्तिकाल की मुख्यधारा के कृष्णभक्त कवि सूरदास का जन्म सन् 1478 में मथुरा के निकट रुनकता या रेणुका क्षेत्र में हुआ था, जबकि कुछ विद्वान मानते हैं कि सूरदास जी का जन्म-स्थान दिल्ली के पास सीही ग्राम है। सूरदास जी जन्मांध थे या बाद में नेत्रहीन हुए, इस बारे में मतभेद की स्थिति है। एक मान्यता के अनुसार सूरदास जी मंदिरों में भजन-कीर्तन किया करते थे। एक बार जंगल से गुजरते समय सूखे कुएँ में गिर गए तब स्वयं श्रीकृष्ण ने इन्हें कुएँ से बाहर निकालकर दिव्य दृष्टि प्रदान की। ये अष्टछाप कवियों में प्रमुख तथा महाप्रभु वल्लभाचार्य के शिष्य थे। सन् 1583 में पारसौली में इनका निधन हुआ।

प्रमुख रचनाएँ—सूरदास के सभी पद कृष्ण से सम्बन्धित हैं। उनकी प्रमुख रचनाएँ सूरसागर, सूरसारावली और साहित्य लहरी हैं। सूरसागर सबसे लोकप्रिय रचना है। कहा जाता है कि सूरसागर में सवा लाख पद में से मात्र दस हजार पद ही मिले हैं।

भाषा-शैली—सूरदास ब्रज भाषा के कवि थे। सूर वात्सल्य और शृंगार के श्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। इनके सभी पद गेय हैं। सूरदास जी की भाषा सहज, सरल और स्वाभाविक है।

कविता का सार

सगुण भक्तिधारा के प्रमुख रचनाकारों में सूरदास जी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके पदों में गोपियों का श्रीकृष्ण के प्रति गहरा अनुराग प्रकट हुआ है। प्रस्तुत पदों में श्रीकृष्ण के मथुरा चले जाने पर उनके वियोग में व्याकुल गोपियों का वर्णन है। वे योग का संदेश लेकर आने वाले उद्धव को तरह-तरह के उपालंभ देती हैं।

पहले पद में गोपियाँ उद्धव पर व्यंग्य करते हुए कहती हैं—हे उद्धव! तुम बहुत सौभाग्यशाली हो, जिसने अपने जीवन में कभी प्रेम नहीं किया। केवल हम ही नासमझ हैं, जो कृष्ण के प्रेम में दिन-रात मग्न रहती हैं। उनके प्रेम से अलग होना अब हमारे वश में नहीं है, क्योंकि जिस प्रकार चींटी गुड़ से चिपकी रहती है, उसी प्रकार हम भी श्रीकृष्ण के प्रेम में लिपटी हुई हैं।

दूसरे पद में गोपियाँ कृष्ण को निष्ठुर बताती हुई उद्धव से कहती हैं—हम तो श्रीकृष्ण के आने की आस से ही अपने मन को सँभाले बैठी थीं, परंतु श्रीकृष्ण ने स्वयं न आकर यह योग-संदेश भेजा है, जिसे सुनकर हमारी साँसों की डोर हमारे हाथ से छूटती जा रही है। उनके दर्शन के लिए ही हमारी साँसें अटकी हुई थीं। कृष्ण के इस वियोग संदेश को सुनकर अब हमसे किसी प्रकार का धैर्य नहीं रखा जाता।

तीसरे पद में गोपियाँ श्रीकृष्ण को अपना जीवनाधार बताते हुए कहती हैं कि जिस प्रकार हारिल पक्षी अपने पंजे में लकड़ी पकड़े रहता है, उसे छोड़ता नहीं, उसी प्रकार वे दिन-रात श्रीकृष्ण का नाम रटती रहती हैं। उन्हें योग का संदेश कड़वी ककड़ी के समान कड़वा लगता है। वे कहती हैं—योग का मार्ग उन्हीं के लिए ठीक है, जिनके मन चकरी के समान चलायमान हों।

चौथे पद में गोपियाँ श्रीकृष्ण पर व्यंग्य करती हुई कहती हैं—ऐसा प्रतीत होता है कि श्रीकृष्ण पूर्ण राजनीतिज्ञ हो गए हैं। वे चतुर तो पहले ही थे, परन्तु अब तो राजनीति के दाँव-पेंच भी सीख गए हैं। पहले के राजनीतिज्ञ जनता की भलाई के लिए कार्य करते थे, परन्तु अब तो वे स्वयं ही अन्याय करने लगे हैं। श्रीकृष्ण योग का संदेश भेजकर हम पर अन्याय ही कर रहे हैं। उनका यह व्यवहार राजधर्म के बिल्कुल विपरीत है।

शब्दार्थ

बड़भागी—भाग्यवान; **अपरस**—अलिप्त, अछूता; **तगा**—धागा; **पुरइनि पात**—कमल का पत्ता; **दागी**—दाग; **माहँ**—में; **प्रीति नदी**—प्रेम की नदी; **पाउँ**—पैर; **बोर्‌यौ**—डुबोया; **परागी**—मुग्ध होना; **अधार**—आधार; **आवन**—आगमन; **बिथा**—व्यथा; **बिरह दही**—विरह की आग में जल रही हैं; **हुतीं**—थीं; **गुहारि**—रक्षा के लिए पुकारना; **जितहिं तैं**—जहाँ से; **उत**—उधर; **धीर**—धैर्य; **मरजादा**—मर्यादा; **न लही**—नहीं रही; **जक री**—रटती रहती है; **सु**—वह; **करी**—भोगा; **मधुकर**—भौरा; **पठाए**—भेजा; **पाइहैं**—पा लेंगी; **तिनहिं**—उनको।

अध्याय — 2 राम-लक्ष्मण-परशुराम संवाद

–(तुलसीदास)

कवि-परिचय

जीवन परिचय—भक्तिकाल की सगुणधारा के अन्तर्गत आने वाली रामभक्ति शाखा के कवियों में सर्वश्रेष्ठ कवि और लोकनायक गोस्वामी तुलसीदास का जन्म 1532 ई. में उत्तर प्रदेश के बाँदा ज़िले के राजापुर नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे एवं माता का नाम हुलसी था। एक जनश्रुति के अनुसार माता की मृत्यु और पिता के द्वारा त्याग दिए जाने पर इनका पालन-पोषण प्रसिद्ध सन्त बाबा नरहरिदास ने किया। इन्होंने ही तुलसी को ज्ञान एवं भक्ति की शिक्षा प्रदान की। इनका विवाह दीनबंधु पाठक की सुपुत्री रत्नावली से हुआ था। कहा जाता है कि वे अपनी रूपवती पत्नी के प्रेम में अत्यधिक आसक्त थे। इस पर इनकी पत्नी ने इनकी भर्त्सना की, गुरुकृपा से ये प्रभु-भक्ति की ओर उन्मुख हो गए। संवत् 1680 (सन् 1623 ई.) में, काशी में इनका निधन हो गया।

रचनाएँ—रामचरित मानस, विनयपत्रिका, कवितावली, गीतावली, कृष्णगीतावली, दोहावली, जानकी-मंगल, पार्वती-मंगल, वैराग्य-सन्दीपनी तथा बरवै-रामायण आदि।

भाषा-शैली—तुलसी ने ब्रज एवं अवधी दोनों ही भाषाओं में रचनाएँ कीं। मुहावरों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा के प्रभाव में विशेष वृद्धि हुई है। तुलसी ने अपने समय में प्रचलित सभी काव्य-शैलियों को अपनाया है। तुलसी ने चौपाई, दोहा, सोरठा, कवित्त, सवैया, बरवै, छप्पय आदि अनेक छंदों का प्रयोग किया है। तुलसी ने काव्य में अलंकारों का प्रयोग सहज स्वाभाविक रूप से किया है। रूपकों के वे सम्राट कहे जाते हैं।

कविता का सार

प्रस्तुत 'राम-लक्ष्मण-परशुराम संवाद' तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरित मानस' महाकाव्य के बालखंड से लिया गया है। इस अंश में सीता के स्वयंवर के समय पर राम के द्वारा धनुष भंग हो जाने पर क्रोधित हुए परशुराम और राम-लक्ष्मण के मध्य हुए संवाद का वर्णन है।

जनकपुरी में हो रहे सीता-स्वयंवर में शिव धनुष के भंग (टूट) हो जाने के समाचार को सुनकर क्रोधित परशुराम स्वयंवर स्थल पर पहुँच जाते हैं। वहाँ पहुँचकर वह धनुष-भंग करने वाले को ललकारते हैं। परशुराम के क्रोध को शांत करने के उद्देश्य से राम परशुराम से कहते हैं कि शिव-धनुष तोड़ने वाला कोई आपका दास ही होगा। राम के इस वचन को सुनकर परशुराम और अधिक क्रोध में बोले, जो सेवा का कार्य करता है वह सेवक होता है और जो शत्रु के समान कार्य करे वह कैसा सेवक? जिसने भी यह कार्य किया है, स्वतः ही सामने आ जाए, नहीं तो सभी राजा मारे जाएँगे। परशुराम की इन बातों को सुनकर लक्ष्मण ने उनसे व्यंग्य भरे स्वर में कहा, "बचपन में तो उन्होंने ऐसे कितने ही धनुष तोड़ डाले तब तो किसी ने इस प्रकार क्रोध नहीं किया। फिर यह धनुष तो बहुत पुराना और कमज़ोर था जो छूते ही टूट गया। लक्ष्मण की इन बातों ने परशुराम के क्रोध रूपी आग में घी के समान कार्य किया। वे अत्यंत क्रोध में लक्ष्मण से बोले, "बालक समझकर मैं तेरा वध नहीं कर रहा हूँ। मूर्ख तू मुझे साधारण मुनि समझ रहा है! मैं धरती से क्षत्रियों का नाश करने वाला तथा बाल ब्रह्मचारी हूँ। अपने इस कठोर फरसे से मैंने क्षत्रियों का नाश किया तथा सहस्रबाहु की भुजाओं को काट डाला। परशुराम की बड़बोली बातों को सुनकर उन्हें अपमानित करने के स्वर में लक्ष्मण ने उनसे कहा कि आप मुझे बालक समझकर भयभीत करने का प्रयास न करें। मैं ब्राह्मण समझकर आप पर हाथ नहीं उठा पा रहा हूँ। वैसे भी हमारे कुल में देवता, ईश्वर भक्त, ब्राह्मण और गाय पर वीरता नहीं दिखाई जाती है। लक्ष्मण की बातों से अपमानित और क्रोधित परशुराम ने लक्ष्मण को इंगित करते हुए विश्वामित्र से कहा कि यह बालक सूर्यवंश पर कलंक के समान और वध करने के योग्य है। परशुराम की बात के प्रत्युत्तर में विश्वामित्र ने उनसे कहा, "ऋषि-मुनि बालकों के दोषों की गणना नहीं करते हैं।" विश्वामित्र की बातों से प्रेरित होकर वह बोले कि आपके कारण मैं इस बालक को छोड़ रहा हूँ अन्यथा इसका वध कर गुरु-ऋण से मुक्त हो जाता। लक्ष्मण भी कहाँ चुप रहने वालों में से थे,

वह बोले, "माता-पिता का ऋण आपने अच्छी तरह चुका दिया। गुरु-ऋण शेष है, जिसके लिए आप चिंतित दिखाई देते हैं। इतने समय में तो उस ऋण का ब्याज भी बहुत बढ़ गया होगा। आप गणना करने वालों को बुला लीजिए। मैं थैली खोलकर सारा ऋण चुका दूँगा। लक्ष्मण के ऐसे वचनों को सुनकर परशुराम के क्रोध की ज्वाला और अधिक भड़क उठी और वह लक्ष्मण को मारने के लिए तत्पर हो उठे। तब श्री राम ने अपने शीतल वचनों से उनका क्रोध शांत किया।

शब्दार्थ

संभुधनु—शिव धनुष; **भंजनिहारा**—तोड़ने वाला; **अरि**—शत्रु; **बिलगाऊ**—अलग; **अवमाने**—अपमान करते हुए; **लरिकाई**—बचपन में; **छति**—हानि; **जून**—जीर्ण, पुराना; **रोसू**—गुस्सा; **सठ**—दुष्ट; **जड़**—मूर्ख; **छेदनिहारा**—काटने वाला; **बिलोकु**—देखकर; **गर्भन्ह**—गर्भ के; **अर्भक**—बच्चे; **बिहसि**—हँसकर; **मृदु**—कोमल; **कुठारु**—कुल्हाड़ी, फरसा; **फूँकि**—फूँक से; **पहारू**—पहाड़; **कुम्हड़बतिया**—काशीफल का फल; **सरासन**—धनुष; **रिस**—गुस्सा; **सुराई**—वीरता; **छमहु**—क्षमा करें; **कौसिक**—विश्वामित्र; **निज**—अपने; **कलंकू**—दाग; **निरंकुसु**—उद्दंड; **असंकू**—शंका रहित; **प्रतापु**—यश; **दुसह**—असहनीय दुःख; **गारी**—गाली; **कायर**—डरपोक; **हाँक**—ज़बरदस्ती; **घोरा**—भयंकर; **उरिन**—ऋण मुक्त; **काढ़ा**—निकालना; **ब्यवहरिआ**—हिसाब करने वाला; **विप्र**—ब्राह्मण; **सुभट**—योद्धा।

अध्याय — 3 आत्मकथ्य

–(जयशंकर प्रसाद)

कवि-परिचय

जीवन-परिचय—छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद का जन्म सन् 1889 में वाराणसी के प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ था। इस परिवार को 'सुंघनी साहु' के नाम से जाना जाता था। इनके पिता श्री देवी प्रसाद जी का तम्बाकू का व्यापार था। काशी के प्रसिद्ध क्वींस कॉलेज में वे पढ़ने गए, परन्तु स्थितियाँ अनुकूल न होने के कारण आठवीं के बाद संस्कृत, हिन्दी व फ़ारसी की घर पर ही पढ़ाई की। युवावस्था में ही पत्नी का निधन होने के कारण जीवन दुःख व अकेलेपन से भरा रहा। सन् 1937 में इनका निधन हो गया।

प्रमुख रचनाएँ—चित्राधार, कानन-कुसुम, झरना, लहर, कामायनी आदि इनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं जिनमें कामायनी उनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। कवि होने के साथ ही प्रसाद जी एक महान् गद्य लेखक भी थे। अजातशत्रु, ध्रुवस्वामिनी, आकाशदीप, कंकाल, स्कंदगुप्त आदि उनकी गद्य रचनाएँ प्रमुख हैं।

भाषा-शैली—प्रसाद जी खड़ी बोली के कवि हैं। प्रकृति से प्रेम, देश-प्रेम, काल्पनिकता आदि उनकी कविता की प्रमुख विशेषताएँ हैं। प्रसाद का साहित्य जीवन की कोमलता, माधुर्य का साहित्य है।

कविता का सार

जयशंकर प्रसाद छायावाद के प्रवर्तक माने जाते हैं। इनके मित्रों ने इनसे आत्मकथा लिखने के लिए कहा। तब इन्होंने 'आत्मकथ्य' नामक कविता लिखी।

कवि कहता है कि यह संसार नश्वर है। इस संसार में सभी जीव एक न एक दिन मुरझाई पत्ती के समान झड़ जाएँगे। सबके जीवन दुःख से भरे हैं। आत्मकथा वाचक अपनी कहानी सुनाकर मानो स्वयं पर ही व्यंग्य करता है। ऐसे में मैं अपनी आत्मकथा कैसे कहूँ? मेरा जीवन दुर्बलताओं से भरा हुआ है। यहाँ तक कि मेरी जीवन रूपी गागर खाली हो चुकी है। कवि मानता है कि यदि उसने अपने बारे में सच बताया तो मित्र स्वयं को ही अपराधी मानने लगेंगे। कवि का जीवन सादगी से भरा था। यदि वह अपनी आत्मकथा लिखेगा, तो लोग उसके जीवन का मज़ाक उड़ाएँगे। प्रेम के जितने भी सुखद क्षण उसके जीवन में थे, उनके बारे में लिखना कठिन था, उसका प्रेम उसे मिलते-मिलते रह गया। ये अधूरी स्मृतियाँ उसके जीने का आधार हैं। अतः वह आत्मकथा लिखकर उन भूली हुई बातों को फिर से याद नहीं करना चाहता। इससे अच्छा यही है कि वह औरों की आत्मकथाएँ सुनता रहे और अपनी भोली आत्मकथा मन में ही छिपाए रहे।

शब्दार्थ

मधुप—मन रूपी भौंरा; **अनंत नीलिमा**—अंतहीन विस्तार; **व्यंग्य मलिन**—खराब ढंग से निंदा करना; **प्रवंचना**—धोखा; **गागर-रीति**—ऐसा मन जिसमें कोई भाव नहीं, खाली घड़ा; **मुस्क्याकर**—मुस्कराकर; **अरुण-कोपल**—लाल गाल; **अनुरागिनी उषा**—प्रेम भरी भोर; **स्मृति पाथेय**—स्मृति रूपी संबल; **पंथा**—राह; **कंथा**—गुदड़ी, अंतर्मन।

OSWAAL BOOKS LEARNING MADE SIMPLE

अध्याय — 4 उत्साह, अट नहीं रही है

—(सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला')

कवि–परिचय

जीवन-परिचय—छायावाद के प्रमुख आधार-स्तम्भ सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म सन् 1899 में बंगाल के महिषादल में हुआ। वे मूलत: गढ़ाकोला (जिला उन्नाव) उ. प्र. के निवासी थे। इनके पिता रामसहाय त्रिपाठी महिषादल रियासत में कोषाध्यक्ष के पद पर तैनात थे। निराला ने कक्षा नौवीं तक की पढ़ाई महिषादल में ही की। इनका पारिवारिक जीवन दु:खों व संघर्षों से भरा था। रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद की विचारधारा ने उन पर विशेष प्रभाव डाला। सन् 1961 में इनका देहांत हो गया।

प्रमुख रचनाएँ—अनामिका, परिमल, गीतिका, कुकरमुत्ता, बेला, अणिमा, अपरा, नए पत्ते आदि उनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं। निराला रचनावली के आठ खंडों में उनका सम्पूर्ण साहित्य प्रकाशित है। निरुपमा, अलका, अप्सरा, प्रभावती आपके प्रमुख उपन्यास हैं।

भाषा-शैली—निराला जी विस्तृत सरोकारों के कवि हैं। उनके विद्रोही स्वभाव ने कविता के जगत में नए प्रयोगों की शुरुआत की। उन्होंने कविता को छंद-बंधन से मुक्त कर मुक्त छंद का प्रयोग किया। उनकी कविता में परिमार्जित तत्सम शब्दों के साथ- साथ बोलचाल की भाषा का भी प्रयोग हुआ।

कविता का सार

उत्साह—उत्साह एक आह्वान गीत है जिसके माध्यम से कवि ने बादल को संबोधित किया है। कविता में बादल एक तरफ पीड़ित-प्यासे जन की अभिलाषा को पूरा करने वाला है, तो दूसरी तरफ बादल नयी कल्पना और नए अंकुर के लिए विप्लव, विध्वंस और क्रांति चेतना उत्पन्न करने वाला भी है। कविता में ललित कल्पना और क्रांति-चेतना दोनों हैं। कवि निराला जी ने बादल के माध्यम से मानव को प्रोत्साहित किया है।

अट नहीं रही है—इस कविता में फाल्गुन मास की सुन्दरता का मोहक वर्णन किया गया है। फाल्गुन मास की शोभा इतनी अधिक है कि इस सुंदरता से आँखें नहीं हट पा रही हैं। कहीं शीतल, मंद हवाएँ चल रही हैं, कहीं आकाश में पक्षी उड़ रहे हैं, कहीं वृक्षों व पौधों पर नए पत्ते व फूल खिले हैं। फाल्गुन मास की शोभा इतनी अधिक है कि वह संसार में समा नहीं पा रही है।

शब्दार्थ

धाराधर—बादल; **उन्मन**—अनमनापन; **निदाघ**—गर्मी; **सकल**—सारे; **आभा**—चमक; **वज्र**—कठोर, इन्द्र का आयुध, **घोर**—भीषण; **पट नहीं रही**—समा नहीं रही है; **ललित**—सुंदर; **नूतन**—नई; **उर**—हृदय; **विकल**—परेशान; **अनंत**—जिसका अंत न हो, आकाश; **शीतल**—ठंडा; **अटना**—समाना; **पाट-पाट**—जगह-जगह; **शोभा-श्री**—सौंदर्य से भरपूर।

अध्याय — 5 यह दंतुरित मुसकान, फसल

—(नागार्जुन)

कवि–परिचय

जीवन-परिचय—आधुनिक काल के नव-चेतना के कवि नागार्जुन का जन्म सन् 1911 में बिहार राज्य के दरभंगा ज़िले के सतलखा नामक ग्राम में हुआ था। उनका मूल नाम वैद्यनाथ मिश्र था। उन्होंने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा संस्कृत में प्राप्त की। उन्होंने शिक्षा बनारस व कोलकाता से प्राप्त की। उन्होंने सन् 1936 में बौद्ध धर्म की दीक्षा ले ली। उनके जीवन पर राहुल सांकृत्यायन और सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का भी प्रभाव पड़ा। दीक्षा लेने के उपरांत उनका नाम 'नागार्जुन' पड़ गया। सन् 1998 में उनका निधन हो गया।

प्रमुख रचनाएँ—युगधारा, सतरंगे पंखों वाली, तुमने कहा था, प्यासी पथराई आँखें, आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने आदि उनकी प्रमुख काव्य रचनाएँ हैं। नागार्जुन कवि होने के साथ उपन्यासकार, आलोचक आदि भी थे। उनका सम्पूर्ण कृतित्त्व "नागार्जुन रचनावली" के सात खंडों में प्रकाशित है।

भाषा-शैली—हिन्दी, मैथिली के साथ नागार्जुन ने बांग्ला व संस्कृत में भी कविताएँ लिखीं। व्यंग्य में माहिर होने के कारण उन्हें 'आधुनिक कबीर' भी कहा जाता है। उन्होंने मुक्त छंद की अतुकांत कविताएँ अधिक लिखीं। वे प्रगतिवादी कवि माने जाते हैं।

कविता का सार

'यह दंतुरित मुस्कान'—कवि शिशु की मनोहारी दंतुरित 'मुस्कान' को देखकर कहता है कि उसकी मुस्कान मृतकों में भी जान डाल देती है। उसका धूल से सना शरीर ऐसे लगता है मानो झोंपड़ी में कमल खिल उठे हों। उसका स्पर्श पाकर लेखक को ऐसा प्रतीत होता है जैसे—बाँस-बबूल के पेड़ों से शेफालिका के फूल झरने लगे हों। शिशु की दंतुरित 'मुसकान' से पत्थर भी पिघलकर मानो जलधारा बन सकते हैं।

पहली बार में शिशु ने कवि को पहचाना नहीं परन्तु जब उसकी माँ ने कवि से उसका परिचय कराया, तो वह (शिशु) पहले तो कवि को कनखियों से देखने लगा और फिर नज़रें मिलने पर मुस्कराने लगा।

फसल—कवि ने फसल को कृषक के परिश्रम, मिट्टी के गुण-धर्म और नदियों के जल का परिणाम बताया है। लाखों-करोड़ों व्यक्तियों के हाथों का स्पर्श, नदियों के पानी का जादू व मिट्टी अपने गुण-धर्म के अनुसार फसल को गरिमा प्रदान करते हैं।

शब्दार्थ

दंतुरित—बच्चों के नए-नए दाँत; **धूलि-धूसर गात**—धूल मिट्टी से सने अंग-प्रत्यंग; **जलजात**—कमल का फूल; **अनिमेष**—बिना पलक झपकाए लगातार देखना; **इतर**—दूसरा; **कनखी**—तिरछी निगाह से देखना; **छविमान**—सुन्दर; **आँखें चार होना**—आँखें मिलाना; **छविमान**—सुन्दर; मृतक—मरे हुए; **परस**—स्पर्श; **पाषाण**—पत्थर।

अध्याय — 6 संगतकार

–(मंगलेश डबराल)

कवि-परिचय

जीवन-परिचय—साहित्यकार मंगलेश डबराल का जन्म सन् 1948 में टिहरी गढ़वाल के काफलपानी नामक ग्राम में हुआ था। इनकी शिक्षा-दीक्षा देहरादून में हुई। आरंभ में इन्होंने दिल्ली में 'हिंदी पेट्रियट', 'प्रतिपक्ष' और 'आसपास' में काम किया और बाद में यह भारत भवन से प्रकाशित होने वाले 'पूर्वग्रह' नामक पत्रिका में सहायक संपादक के पद पर कार्य करने लगे। इन्होंने कुछ समय तक इलाहाबाद और लखनऊ से प्रकाशित 'अमृत प्रभात' में भी कार्य किया। सन् 1983 में 'जनसत्ता' अखबार में साहित्य संपादक का पदभार सँभाला और कुछ समय तक 'सहारा समय' में भी संपादन कार्य किया। आजकल आप 'नेशनल बुक ट्रस्ट' से जुड़े हुए हैं।

रचनाएँ—पहाड़ पर लालटेन, घर का रास्ता, हम जो देखते हैं, आवाज़ भी एक जगह है आदि प्रमुख हैं।

भाषा-शैली—इनकी भाषा सहज एवं सरल है। सहजता से भाव समझ में आने वाले शब्दों का प्रयोग आपकी विशेषता है। आपके काव्य में व्यंग्यात्मक और वर्णनात्मक शैली के दर्शन होते हैं।

कविता का सार

प्रस्तुत कविता के माध्यम से कवि ने उन सहायक गायक कलाकारों के महत्त्व को प्रतिपादित करने का प्रयास किया है जो मुख्य गायकों के स्वर में अपना स्वर मिलाकर उनके स्वर को गति प्रदान करके सहायता प्रदान करते हैं किन्तु कभी भी अपनी उन्नति का प्रयास नहीं करते हैं। इन सहायक गायक कलाकारों को संगतकार कहा जाता है।

कवि कहता है कि एक संगतकार मुख्य गायक के स्वर में अपना स्वर मिलाकर मुख्य गायक के स्वर को गति प्रदान करता है। उसके स्वर के भारी होने पर उसे सहायता प्रदान करता है। यहाँ तक कि मुख्य गायक का आत्मविश्वास डगमगाने पर भी संगतकार उसे धैर्य बँधाता है। इस प्रकार संगतकार सदैव मुख्य गायक के स्वर में अपना स्वर मिलाकर उसे जटिल तानों की उलझन से उभारता आया है। स्वर से भटकने पर वह अंतरा की मुख्य पंक्ति को पकड़कर मुख्य गायक को सँभालता है। संगतकार की ऐसी भूमिका होती है जैसे मुख्य गायक के बिखरे या छूटे हुए सामान को समेट रहा हो।

कभी-कभी ऊँचे स्वर में गाते समय जब मुख्य गायक का गला बैठने लगता है और उसकी प्रेरणा उसका साथ छोड़ने लगती है, तब ऐसे समय में संगतकार उसके स्वर में अपना स्वर मिलाता है जिससे मुख्य गायक को अकेलेपन का आभास न हो। ऐसा करते समय संगतकार की

आवाज़ में एक हिचक और संकोच होता है कि कहीं उसकी आवाज़ मुख्य गायक की आवाज़ से ऊँची न हो जाए इसलिए वह सदैव सतर्क रहता है। कवि के अनुसार अपने स्वर को मुख्य गायक के स्वर से नीचा रखना संगतकार की विफलता नहीं अपितु उसकी मनुष्यता है।

शब्दार्थ

गरज़—ऊँची, गंभीर आवाज़। **अंतरा**—गीत की टेक। **जटिल**—कठिन। **लाँघकर**—पार कर। **समेटना**—एकत्र करना। **नौसिखिया**—नया-नया सीखने वाला। **सप्तक**—संगीत के सात स्वर। **अस्त होना**—छिप जाना। **ढाँढस बँधाना**—सांत्वना देना। **हिचक**—संकोच, झिझक। **विफलता**—असफलता।

खण्ड (स) कृतिका (भाग-2)

अध्याय — 1 माता का अँचल

—(शिवपूजन सहाय)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय—शिवपूजन सहाय का जन्म बिहार के भोजपुर जिले के गाँव उनवास में सन् 1893 में हुआ था। इनका बचपन का नाम भोलानाथ था। ये दसवीं परीक्षा पास करने के बाद बनारस की कचहरी में नकलनवीस की नौकरी करने लगे थे। इस नौकरी को छोड़ने के बाद ये हिंदी के अध्यापक बने। कुछ समय के बाद नौकरी से त्यागपत्र देकर असहयोग आंदोलन में शमिल हो गए। इन्होंने जागरण, हिमालय, माधुरी तथा बालक आदि अनेक पत्रिकाओं का संपादन किया। इसके अतिरिक्त ये हिंदी की प्रतिष्ठित पत्रिका मतवाला के संपादक-मण्डल में भी शामिल थे। सन् 1963 में इनका देहांत हो गया।

प्रमुख रचनाएँ—शिवपूजन सहाय मुख्य रूप से एक गद्य लेखक थे। इनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नलिखित हैं—

देहाती दुनिया, ग्राम सुधार, वे दिन वे लोग और स्मृतिशेष आदि। इनकी सभी रचनाएँ शिवपूजन सहाय रचनावली के नाम से चार खण्डों में प्रकाशित हुई हैं।

भाषा-शैली—इन्होंने उर्दू तथा अंग्रेज़ी सभी भाषाओं के शब्दों का प्रयोग किया है। इनकी भाषा सहज, सरल तथा बोधगम्य है। इन्होंने बिम्बों व प्रतीकों का भी प्रयोग किया है।

पाठ का सारांश

'माता का अँचल' में ग्रामीण जीवन की कहानी सरल, सहज भाषा में कही गई है। कहानी में देशज शब्दों का प्रयोग बहुलता से किया गया है।

पिता से लगाव—बचपन में लेखक का अपने पिता से अधिक लगाव था। वह पिता के साथ ही सोता, उठता-बैठता तथा खाता-पीता था। पिता उसे अपने साथ ही जगाते और नहला-धुलाकर अपने साथ ही पूजा पर बिठा लेते थे। पिता की देखा-देखी वह भी हठ करके अपने माथे पर भभूत का त्रिपुंड लगवा लेता था। लम्बे बालों और मस्तक पर लगे त्रिपुंड से लेखक 'बम भोला' जैसा लगता था। लेखक का नाम तो 'तारकेश्वरनाथ' था, लेकिन पिता प्यार से उसे 'भोलानाथ' कहकर बुलाते थे। जब उसके पिता रामायण का पाठ करते तो वह दर्पण में अपना मुँह देखा करता और पिता की दृष्टि पड़ने पर लज़ाकर और मुस्कराकर दर्पण रख देता था। पूजा के बाद पिता अपनी 'रामनामा' बही, पर एक हज़ार बार रामनाम लिखते। इसके बाद कागज़ के छोटे-छोटे टुकड़ों पर पाँच सौ बार राम-नाम लिखकर आटे की गोलियों में लपेट देते और गंगा नदी के किनारे जाकर उन गोलियों को मछलियों को खिलाते थे। लेखक उनके कंधे पर बैठे-बैठे यह सब देखता था। लौटते समय पिता उसे पेड़ों की डालियों पर बिठाकर झूला झुलाते थे।

पिता के साथ खेल—भोलानाथ के पिता उसके साथ अनेक प्रकार से खेल-खेलते थे। कभी उससे कुश्ती लड़ते और जानबूझकर हार जाते। लेखक उनकी छाती पर चढ़कर उनकी लम्बी-लम्बी मूँछें उखाड़ने लगता। कभी वे लेखक के गालों पर खट्टा-मीठा चुम्मा लेते। कभी अपनी दाढ़ी-मूँछ लेखक के गालों पर गढ़ा देते और उसके द्वारा मूँछें नोंचे जाने पर झूठ-मूठ रोने लगते। यह देखकर लेखक हँसने लगता।

भोजन के समय माता-पिता का लाड़—भोलानाथ (लेखक) पिता के साथ ही भोजन करता था। पिता उसे दूध या दही के साथ भात खिलाते थे। पेट भर जाने पर भी माँ उसे अपने हाथ से खिलाने का हठ करती थीं। वह भोलानाथ के पिता से कहतीं कि मर्द बच्चों को खिलाना नहीं जानते। बच्चों का पेट तो माँ के खिलाने पर ही भरता है। इसके बाद वह हर कौर को मैना, कबूतर आदि पक्षियों का नाम देकर खिलाने लगतीं और भोलानाथ खाता चला जाता।

माता द्वारा तेल का उबटन व 'कन्हैया' बनाना—जब भोलानाथ माँ की पकड़ में आ जाता तो माँ उनके बालों में बहुत-सा सरसों का तेल डाल देतीं। भोलानाथ छूटने के लिए काफी छटपटाता लेकिन माँ उसकी नाभि और माथे पर काजल की बिन्दी लगाकर,चोटी गूँथकर और उसमें फूलदार लट्टू बाँधकर रंगीन कुर्ता-टोपी पहनाकर कन्हैया बनाकर ही छोड़तीं। भोलानाथ सिसकते हुए पिता की गोद में बाहर आते।

अनेक प्रकार के खेल—बाहर आते ही भोलानाथ को अपने संगी-साथी बालकों का झुंड खड़ा मिलता। उन्हें देखते ही वह पिता की गोद से उतरकर बालकों के साथ खेल में लग जाता। उनके खेल, तमाशे या नाटक जैसे होते थे। कभी घर के चबूतरे के एक कोने में पिता के नहाने की चौकी पर हलवाई की दुकान सजाई जाती थी। मिट्टी के ढेलों, पत्तियों, गीली मिट्टी और फूटे घड़े के टुकड़ों से तरह-तरह की मिठाइयाँ सजाई जाती थीं।

थोड़ी देर के बाद घरौंदा बनने लगता। मिट्टी की मेंड़ से दीवार, तिनकों से छप्पर, दाँतुन से खम्भे और दियासिलाई की डिब्बियों से किवाड़ बनाए जाते। घड़े के मुँह से चूल्हा-चक्की, दीए से कढ़ाई, पिता की आचमनी की कलछी बनती। पानी को घी, धूल को आटा और बालू को चीनी मानकर दावत की तैयारी होने लगती। तब लेखक के पिता भी चुपचाप आकर पंगत में बैठ जाते। उन्हें देखते ही सब बालक हँसते हुए वहाँ से भाग जाते।

कभी सब बालक मिलकर बारात निकालते थे। बारात में कनस्तर का तंबूरा बजता और आम की गुठली को घिसकर उससे शहनाई बजाई जाती थी। टूटी चूहेदानी की पालकी बनती और भोलानाथ समधी बनकर बकरे पर सवार होकर लड़की वाले के द्वार पर जा पहुँचता। वहाँ काठ की पटरियों से घिरे छोटे से आँगन में कुल्हड़ का कलसा रखा होता था फिर बारात दुल्हन के साथ वापस लौटती। खटोली पर लाल परदा डालकर उसमें दुल्हन बैठ जाती। लौटकर आने पर भोलानाथ के पिता जैसे ही लाल परदा हटाकर दुल्हन का मुँह निहारते, सारे बालक वहाँ से हँसते हुए भाग जाते।

कभी खेती करने का खेल होता तब चबूतरा ही खेत बन जाता। उसके कोने पर गरारी गाढ़कर और गली को कुआँ मानकर सिंचाई की जुगाड़ की जाती। दो बच्चे बैल बनकर मोट को खींचते। कंकड़ों के बीज बोए जाते। ज़रा देर में फ़सल तैयार होकर कट जाती और बच्चे गाने लगते—ऊँच नीच में बई कियारी, जो उपजी सो भई हमारी।

जब फसल का ढेर लगता तो बाबूजी आकर पूछते, इस साल की खेती कैसी रही भोलानाथ? बस, सारे बच्चे खेत-खलिहान छोड़ हँसते हुए भाग जाते थे।

इसी प्रकार के खेल लेखक और उनकी मित्र मण्डली खेला करती थी।

शरारत और सजा—बच्चों को शरारत करने और लोगों को चिढ़ाने में भी बड़ा मजा आता था। एक बार बहू को विदा कराकर ला रहे एक बूढ़े वर को लड़कों ने यह कहकर चिढ़ाया—'रहरी में रहरी पुरान रहरी, डोला के कनिया हमार मेहरी।'

बूढ़े ने ढेले मार-मारकर बच्चों को दूर तक खदेड़ा। एक दिन सभी बच्चे बाग में आम खाने गए। इसी समय बड़े ज़ोर की बारिश होने लगी। बच्चों ने किसी तरह पेड़ों से चिपककर जान बचाई। वर्षा थमने पर बाग में बहुत से बिच्छू रेंगते दिखाई दिए। यह देख सभी बच्चे भागे। रास्ते में उनको एक बूढ़े व्यक्ति मूसन तिवारी मिल गए। उन्हें कम दिखता था। बैजू नाम के लड़के ने उन्हें चिढ़ाने को कहा—'बुढ़वा बेईमान माँगे करैला का चोखा'।

मूसन तिवारी भड़क उठे और उन्होंने बच्चों को बुरी तरह खदेड़ा। मूसन तिवारी वहाँ से पाठशाला जा पहुँचे और गुरुजी से बैजू और भोलानाथ की शिकायत की। गुरुजी ने चार लड़कों को बैजू और भोलानाथ को पकड़कर लाने का आदेश दिया। बैजू तो हाथ न आया लेकिन भोलानाथ को पकड़कर गुरुजी के आगे पेश किया गया। गुरुजी ने भोलानाथ की अच्छी तरह खबर ली। पिता को पता चला तो गुरुजी की खुशामद करके भोलानाथ को छुड़ाकर घर लाए।

साँप से भयभीत होना—एक बार एक टीले पर जाकर बच्चों ने चूहों के बिलों में पानी उलीचना शुरू कर दिया। इसी बीच एक बिल में से एक साँप निकल आया। साँप को देखते ही सारे बच्चे डर के मारे रोते-चिल्लाते भागे। कोई औंधा गिरा तो कोई चित, किसी का सिर फूटा तो किसी के दाँत टूटे।

माँ की गोद में जा छिपना—भोलानाथ भागता हुआ घर में घुसा और सीधे माँ की गोद में जा छिपा। माँ उसकी दशा देखकर व्याकुल हो गईं। डर के मारे भोलानाथ के मुँह से आवाज़ भी नहीं निकल रही थी। वह 'साँ-स-साँ' ही कह पा रहा था। बाबूजी भी दौड़कर पहुँचे और भोलानाथ को गोद में लेना चाहा लेकिन भोलानाथ माँ का अँचल छोड़कर जाने को तैयार नहीं हुआ।

शब्दार्थ

मृदंग—एक तरह का वाद्य यंत्र; **तड़के**—प्रभात, सवेरा; **लिलार**—ललाट; **त्रिपुंड**—माथे पर लगाये जाने वाला आड़ी या अर्द्ध चंद्रकार रेखाओं का तिलक; **आइना**—दर्पण; **उतान**—पीठ के बल लेटना। **ठौर**—स्थान; **सानकर**—मिलाकर, लपेटकर, गूँथकर। **अफर**—भर-पेट से अधिक खा लेना; **महतारी**—माता; **कड़वा तेल**—सरसों का तेल; **बोथकर**—सराबोर कर देना; **चँदोआ**—छोटा शामियाना; **ज़्योनार**—भोज, दावत; **ज़ीमना**—भोजन करना; **अमोले**—आम का उगता हुआ पौधा; **ओहार**—पर्दे के लिए डाला कपड़ा; **सकोरे**—मिट्टी का बना छिछला कटोरा। **रहरी**—अरहर; **अँठई**-कुत्ते के शरीर में चिपके रहने वाले छोटे कीड़े, किलनी। **चिरौरी**—दीनतापूर्वक की जाने वाली प्रार्थना, विनती। **ओसारा**—बरामदा; **अमनिया**—साफ़, शुद्ध।

अध्याय — 2 साना-साना हाथ जोड़ि....

—(मधु कांकरिया)

लेखिका-परिचय

जन्म-परिचय—लेखिका मधु कांकरिया का जन्म 23 मार्च 1957 को कोलकाता में हुआ। इन्होंने कोलकाता विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में एम.ए. किया साथ ही कम्प्यूटर एप्लीकेशन में डिप्लोमा किया। मधु कांकरिया की रचनाओं में विचार और संवेदना की नवीनता मिलती है। समाज में व्याप्त अनेक ज्वलंत समस्याएँ इनकी रचनाओं के विषय रहे हैं।

रचनाएँ—पत्ताखोर, सलाम आखिरी, खुले गगन के लाल सितारे, बीतते हुए, अंत में ईशु, व अनेक यात्रा वृतांत जैसे—साना-साना हाथ जोड़ि।

भाषा-शैली—इनकी भाषा बहुत प्रौढ़ तथा सहज है। शब्द विन्यास सटीक है। अधिकतर वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है।

पाठ का सारांश

यात्रा की प्रेरणा—महानगरों व नगरों की भावशून्यता, भागमभाग और यंत्रवत जीवन पद्धति की ऊब लेखिका को दूर-दूर की यात्राओं को करने के लिए प्रेरित करती है। मधु जी ने उन्हीं यात्राओं के अनुभवों को अपने इस यात्रा-वृत्तांत में शब्दबद्ध किया है। उन्होंने 'साना-साना हाथ जोड़ि·····' यात्रा वृत्तान्त में पूर्वोत्तर भारत के सिक्किम राज्य की राजधानी गैंगटॉक, हिमालय की यात्रा व उसके अनंत सौंदर्य का काव्यात्मक वर्णन किया है।

गैंगटॉक—लेखिका ने गैंगटॉक को इतिहास और वर्तमान के संधि:स्थल पर खड़ा, मेहनती बादशाहों का शहर माना है, क्योंकि वहाँ के सभी लोग बड़े ही मेहनती हैं इसलिए उस शहर का सब कुछ सुन्दर था, उसकी सुबह भी सुन्दर थी और शाम भी। खासकर लेखिका को गैंगटॉक की रहस्यमयी सितारों भरी रात ने सम्मोहित किया। वहीं पर उन्होंने एक नेपाली युवती से उन्हीं की भाषा में प्रार्थना के बोल सीखे, जो इस प्रकार हैं—"साना-साना हाथ जोड़ि, गर्दह प्रार्थना। हाम्रो जीवन तिम्रो कौसली" जिसका अर्थ है—छोटे-छोटे से हाथ जोड़कर प्रार्थना कर रही हूँ कि मेरा सारा जीवन अच्छाइयों को समर्पित हो।

बौद्ध धर्म—गैंगटॉक से यूमथांग को निकलते ही लेखिका को एक कतार में लगी सफ़ेद-सफ़ेद बौद्ध पताकाएँ दिखाई दीं जो ध्वज की तरह फहरा रही थीं। ये शान्ति और अहिंसा की प्रतीक थीं, इन पताकाओं पर मंत्र लिखे हुए थे।

लेखिका के गाइड ने उन्हें बताया कि जब किसी बौद्ध मतावलम्बी की मृत्यु होती है, तो उसकी आत्मा की शांति के लिए शहर से दूर किसी भी पवित्र स्थान पर एक सौ आठ श्वेत पताकाएँ फहरा दी जाती हैं। इन्हें उतारा नहीं जाता है। कई बार नए शुभ कार्य की शुरुआत में भी रंगीन पताकाएँ फहरा दी जाती हैं।

आगे चलकर मधु जी को एक कुटिया के भीतर घूमता हुआ चक्र दिखाई दिया जिसे धर्म चक्र या प्रेयर व्हील कहा जाता था। नार्गे ने बताया कि इसे घुमाने से सारे पाप धुल जाते हैं। लेखिका ने महसूस किया कि मैदान हो या पहाड़, तमाम वैज्ञानिक प्रगतियों के बावजूद इस देश की आत्मा एक जैसी है।

हिमालय का अनन्त सौन्दर्य—लेखिका किसी से बातचीत किए बिना ही हिमालय के अद्‌भुत सौन्दर्य को अपने भीतर समेट लेना चाहती थीं। तभी उन्होंने खूब ऊँचाई से पूरे वेग के साथ सर्वोच्च शिखर से गिरता, फेन उगलता झरना देखा जिसका नाम था—'सेवन सिस्टर्स वाटर फॉल।' लेखिका ने जैसे ही उस झरने की जलधारा में पाँव डुबोया उनका मन काव्यमय हो उठा, उन्हें ऐसा लगा जैसे उनके अन्दर की तामसिकताएँ और दुष्ट वासनाएँ जल की निर्मल धारा में बह गईं। आगे बढ़ने पर उन्होंने पल-पल परिवर्तित होते हिमालय के सौंदर्य को देखा जहाँ सभी ओर जन्नत बिखरी पड़ी थी। पल भर में ही ब्रह्माण्ड में इतना सब कुछ घटित हो रहा था······निरन्तर प्रवाहमान झरने, वेग से बहती तिस्ता नदी, सामने उठती धुँध, आवारा बादल, झूमते हुए प्रियुता और रूडो डेंड्रों के फूल सभी अपनी लय, तान और प्रवाह में नृत्य करते हुए प्रतीत हो रहे थे। हिमालय अब लेखिका के लिए कविता नहीं, दर्शन बन गया था।

कटाओ की यात्रा—लेखिका बर्फ़ देखने के लिए बेचैन थी, तभी उन्हें किसी सिक्कमी युवक ने बताया कि अगर बर्फ़ देखनी है तो कटाओ जाना पड़ेगा। कटाओ को भारत का स्विट्‌जरलैंड कहते हैं। कटाओ पहुँचते ही बर्फ़ से ढके पहाड़ दिखाई देने लगे जो चाँदी की तरह चमक रहे थे, उन पर बर्फ़ साबुन के झाग की तरह सब ओर गिरी हुई थी। सभी सैलानी जो लेखिका के साथ थे जीप से उतरकर बर्फ़ पर कूदने लगे, पर लेखिका सोच रही थी कि शायद ऐसी ही विभोर कर देने वाली दिव्यता के बीच हमारे ऋषि-मुनियों ने वेदों की रचना की होगी। जीवन के सत्यों को खोजा होगा, 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' का महामंत्र पाया होगा। हिमालय की सम्पूर्णता का प्रतीक सौंदर्य ऐसा ही था कि बड़े से बड़े अपराधी को भी करुणा का अवतार 'बुद्ध' बना दे।

पहाड़ी महिलाओं की श्रमशीलता—हिमालय की यात्रा के दौरान लेखिका ने पाया कि इतने स्वर्गीय सौन्दर्य, नदी, फूलों, वादियों और झरनों के बीच भूख, मौत, दैन्य और जिंदा रहने की इस जंग में पहाड़ी औरतों को हाथ में कुदाल और हथौड़ा लिए हुए पत्थर तोड़ते देखा। मेरे पूछने पर बोर्ड रोड ऑर्गनाइजेशन के एक कर्मचारी ने बताया कि जिन रास्तों से गुज़रते हुए आप हिमशिखरों से टक्कर लेने जा रही हैं ये पहाड़िनें उन्हीं रास्तों को चौड़ा कर रही हैं। इनके हाथ में पड़े ठेक आम ज़िंदगी की कहानी कह रहे थे। ये कितना कम लेकर समाज को कितना अधिक वापस लौटा देती हैं। यहीं वेस्ट एट रिपेइंग है। ये पहाड़िनें घर का भी काम करती हैं और बाहर का भी। इनके कामों में गाय चराना, लकड़ियाँ काटकर उनके भारी भरकम गट्‌ठर को लाद कर ले जाना शामिल है।

फ़ौजी छावनियाँ—लेखिका का सफ़र जब थोड़ा और आगे बढ़ा तो उन्हें वहाँ कुछ फ़ौजी छावनियाँ दिखाई दीं, तभी उन्हें ध्यान आया कि यह बॉर्डर एरिया है थोड़ी ही दूर पर चीन की सीमा है। एक फ़ौजी से मधु जी ने पूछा कि इतनी कड़कड़ाती ठंड में आपको बहुत तकलीफ़ होती होगी। उसने एक उदास हँसी हँसते हुए कहा—"आप चैन की नींद सो सकें, इसलिए तो हम यहाँ पहरा दे रहे हैं।"

लेखिका का मन उदास हो गया—वे सोचने लगीं कि वैशाख के महीने में इस बर्फ़ीले स्थान पर हम पाँच मिनट में ही ठिठुरने लगेंगे। हमारे ये फ़ौजी भाई पौष और माघ में भी तैनात रहते हैं, उस समय सिवाय पेट्रोल के सब कुछ जम जाता है, ऐसे समय में ये जवान हमारे देश की और हमारी सुरक्षा के लिए तैयार खड़े रहते हैं।

नार्गे एक कुशल गाइड—गैंगटॉक से लेकर हिमालय की यात्रा के दौरान नार्गे ने एक कुशल गाइड की तरह लेखिका और उनके साथियों का मार्ग निर्देशन किया। उसके अन्दर वे सभी खूबियाँ थीं जो एक कुशल गाइड के अन्दर होनी चाहिए, उसे गैंगटॉक से लेकर हिमालय तक की सभी ऐतिहासिक एवं भौगोलिक स्थिति का पूर्ण ज्ञान था। उसे कई तरह की भाषाओं का ज्ञान था। उसे अपने सैलानियों की रुचि का भी पूरा ध्यान रहता था।

शब्दार्थ

अतींद्रियता—इंद्रियों से परे; **उजास**—उज़ाला; **सम्मोहन**—मोहित होना; **कपाट**—दरवाजा; **अवधारणाएँ**—विचार; **रफ़्ता-रफ़्ता**—धीरे-धीरे; **ओझल**—दिखाई न देना; **वीरान**—सुनसान; **जल प्रपात**—झरना; **पराकाष्ठा**—चरमसीमा; **मशगूल**—व्यस्त; **अभिशप्त**—शापित; **शिद्‌दत**—बहुत अधिक इच्छा; **तामसिकता**—बुरी भावना, तमोगुण; **अनमनी**—उदास, बेमन से; **तंद्रिल अवस्था**—नींद की स्थिति; **सयानी**—समझदार;**चैरवेति-चैरवेति**—चलते रहो, चलते रहो; **वजूद**—अस्तित्व; **संजीदा**—गंभीर; **गमगीन**—दुखी; **वेस्ट एट रिपेईंग**—कम लेना और अधिक देना; **असह्य**—जो सहन न हो; **मद्‌धिम**—धीमे; **हलाहल**—विष; **राम रोछो**—अच्छा है; **ख़्वाहिश**—इच्छा; **ठगा-सा रह जाना**—आश्चर्य चकित होना; **लम्हा**—पल, क्षण; **मियाद**—अवधि, सीमा; **आबोहवा**—जलवायु; **विस्मय**—आश्चर्य; **रकम रकम**—तरह-तरह के; **मुंड़की**—सिर। **सरहद** — सीमा; **तामसिकताएँ** — तमोगुण से युक्त कुटिल; **दुष्ट वासनाएँ** — बुरी इच्छाएँ; **जन्नत** — स्वर्ग; **ठाठे** — हाथ में पड़ने वाले निशान या गाँठें; **वर्वीला** — बढ़े पेट वाला; **हलाहल** — जहर; **संक्रमण** — मलना;

अध्याय — 3 मैं क्यों लिखता हूँ?

–(अज्ञेय)

लेखक-परिचय

जीवन-परिचय— लेखक 'अज्ञेय' का वास्तविक नाम सच्चिदानंद हीरानन्द वात्सयायन 'अज्ञेय' है। इनका जन्म 7 मार्च 1911 को उत्तर प्रदेश के देवरिया ज़िले के कुशीनगर नामक स्थान पर हुआ था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा पिता की देख-रेख में घर पर ही हुई थी। 1925 में पंजाब से एंट्रेंस की परीक्षा पास की और 1927 में बी.एस. सी करने लाहौर के फारमन कॉलेज में प्रवेश लिया। इन्होंने कई प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं का संपादन भी किया। 1964 में साहित्य अकादमी पुरस्कार और 1969 में भारतीय ज्ञान पाठ पुरस्कार प्राप्त हुआ।

रचनाएँ— कविताएँ—घास पर क्षणभर, बावरा अहेरी, इंद्र धनु रौंदे हुए ये, अरी ओ करूणा प्रभामय, आँगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार।

कहानी-संग्रह— विपथवा, परंपरा कोठरी की बात, शरणार्थी, जयदोल।

उपन्यास— शेखर—एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी।

यात्रावृत्तात— अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछला।

निबन्ध संग्रह— सबरंग, त्रिशंकु आत्मावेपद, आधुनिक साहित्य।

पाठ का सार

मैं क्यों लिखता हूँ? यह प्रश्न बहुत सरल होने के साथ-साथ कठिन भी है क्योंकि इसका सच्चा उत्तर लेखक अज्ञेय के आंतरिक जीवन से सम्बन्धित है। एक उत्तर यह है कि मैं स्वयं जानना चाहता हूँ कि क्यों लिखता हूँ? किसलिए लिखता हूँ? वास्तव में सच्चा उत्तर यही है कि लिखकर ही लेखक उस अंदरूनी विवशता को पहचानता है जिसके कारण उसने लिखा और लिखकर ही वह मुक्त हो पाता है। मैं भी उस आन्तरिक विवशता से मुक्ति पाने के लिए तटस्थ होकर उसे देखने और पहचानने के लिए लिखता हूँ।

लेखक का कृतिकार के विषय में विचार—लेखक का विश्वास है कि सभी लेखक कृतिकार नहीं होते; और न ही उनका समस्त लेखन कृति होता है। यह ठीक है कि कुछ कृतिकार ख्याति मिल जाने के बाद, कुछ बाहर की विवशता से भी लिखते जाते हैं।

संपादक के आग्रह से, प्रकाशक के तकाज़े से, आर्थिक आवश्यकता से भी कुछ लोग लिखते हैं पर कुछ कृतिकार हमेशा ईमानदारी से यह भेद बनाए रखते हैं कि कौन-सी कृति उनकी आन्तरिक प्रेरणा का फल है और कौन-सा लेखन बाहरी दबाव का, पर बाहर का दबाव वास्तव में दबाव नहीं रखता, वह मानो भीतरी उन्मेष का निमित्त बन जाता है।

कृतिकार का स्वभाव और आत्मानुशासन—कृतिकार के स्वभाव और आत्मानुशासन का बहुत महत्त्व होता है। कुछ ऐसे आलसी जीव होते हैं कि बिना बाहरी दबाव के लिख ही नहीं पाते—इसी के सहारे उनकी भीतर की विवशता स्पष्ट होती है, उनकी यह विवशता कुछ वैसी ही है जैसे प्रात: काल नींद खुल जाने पर भी कोई बिस्तर पर तब तक पड़ा रहे जब तक कि घड़ी का अलार्म न बज जाए, पर मुझे झूठ सहारे की ज़रूरत नहीं पड़ती लेकिन उससे बाधा भी उत्पन्न नहीं होती। उठने वाली बात की तुलना करूँ तो मैं सुबह अपने आप ही उठ जाता हूँ पर अलार्म भी बज जाए तो कोई हानि नहीं मानता।

भीतरी विवशता—भीतरी विवशता को बताना बड़ा कठिन है इसे लेखक ने अपनी एक कविता की चर्चा कर स्पष्ट किया है। उसके अनुसार मैं विज्ञान का विद्यार्थी रहा हूँ, मेरी नियमित शिक्षा उसी विषय में हुई। अणु क्या होता है? रेडियोधर्मिता के क्या प्रभाव होते हैं? इन सबका पुस्तकीय या सैद्धान्तिक ज्ञान तो मुझे था। फिर जब हिरोशिमा में अणु-बम गिरा, तब उसके समाचार और उसके परवर्ती प्रभावों का भी विवरण मैं पढ़ता रहा। तो विज्ञान के इस दुरुपयोग के प्रति बुद्धि का विद्रोह स्वाभाविक था, मैंने लेख आदि में कुछ लिखा भी पर कविता इस विषय में नहीं लिखी, क्योंकि अनुभूति के स्तर की विवशता बौद्धिक पकड़ से आगे की बात होती है।

लेखक की जापान यात्रा—जापान जाने का अवसर मिला तो हिरोशिमा भी गया और वह अस्पताल भी देखा जहाँ रेडियोधर्मिता से आहत लोग वर्षों से कराह रहे थे। इस प्रकार प्रत्यक्ष अनुभव भी हुआ पर अनुभव से अनुभूति गहरी चीज़ है, एक कृतिकार के लिए। अनुभव तो घटित होता है, पर अनुभूति संवेदना और कल्पना के सहारे उस सत्य को आत्मसात् कर लेती है जो वास्तव में कृतिकार के साथ घटित नहीं हुआ है।

हिरोशिमा में सब कुछ देखकर भी उस समय कुछ नहीं देखा। फिर एक दिन सड़क पर घूमते हुए देखा कि जले हुए पत्थर पर एक लम्बी उज़ली छाया है—विस्फोट के समय कोई वहाँ खड़ा रहा होगा और विस्फोट से बिखरे हुए रेडियोधर्मी पदार्थ की किरणें उसमें रुद्ध हो गई होंगी। जो आस-पास से आगे बढ़ गईं उन्होंने पत्थर को झुलसा दिया, जो उस व्यक्ति पर अटकीं उन्होंने उसे भाप बनाकर उड़ा दिया होगा। इस तरह समूची ट्रेजडी जैसे पत्थर पर अंकित हो गई।

उस छाया को देखकर इतिहास सहसा एक जले हुए सूर्य-सा मेरे भीतर उग आया और डूब गया। उस क्षण में अणु विस्फोट का दृश्य मेरी अनुभूति में प्रत्यक्ष हो गया—और मैं स्वयं हिरोशिमा के विस्फोट का भोक्ता बन गया। अचानक एक दिन मैंने हिरोशिमा पर कविता लिखी-जापान में नहीं, भारत लौटकर, रेलगाड़ी में बैठे-बैठे।

यह कविता अच्छी है या बुरी, इससे मुझे मतलब नहीं है। मेरी यह कविता अनुभूति प्रसूत है, यही मेरे लिए महत्व की बात है।

शब्दार्थ

आंतरिक—हृदयगत। **आभ्यंतर**—भीतरी। **विवशता**—मज़बूरी। **मुक्त**—बंधन रहित। **कृतिकार**—रचनाकार। **उन्मेष**—प्रकाश। **निमित्ति**—कारण। **बाधा**—रुकावट। **बखनना**—वर्णन करना। **दुरुपयोग**—अनुचित प्रयोग। **अनुभूति**—महसूस करना। **आहत**—घायल, दु:खी। **तत्काल**—उसीक्षण। **कसर**—कमी। **समूची**—पूरी तरह, संपूर्ण। **ट्रेजडी**—त्रासदी। **अवाक्**—हैरान। **सहसा**—अचानक। **भोक्ता**—भोगने वाला। **आकुलता**—बैचनी।

लेखन-खण्ड

अध्याय — 1 अनुच्छेद लेखन

स्मरणीय बिन्दु

अनुच्छेद लेखन एक कला है। किसी विषय से सम्बन्धित सभी महत्त्वपूर्ण बातों को निर्धारित शब्द सीमा में लिखने के लिए बड़े बुद्धि कौशल की आवश्यकता होती है। दिए गए विषय को ध्यान में रखकर अनुच्छेद लिखते समय निम्न बातों को ध्यान रखना आवश्यक है—

1. अनुच्छेद लेखन एक प्रकार की संक्षिप्त लेखन शैली है अत: मुख्य विषय पर ही ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।
2. प्रश्न पत्र में दिए गए संकेत बिन्दुओं को ध्यानपूर्वक पढ़ना व समझना चाहिए।
3. अनुच्छेद लेखन में व्यर्थ की बातों का समावेश नहीं करना चाहिए अन्यथा उसका प्रभाव शिथिल हो जाता है।
4. अनुच्छेद लेखन में विषय को इस प्रकार समायोजित करना चाहिए कि उसकी शब्द सीमा 120 शब्दों के आस-पास ही रहे।
5. अनुच्छेद लेखन में अनुभूति की प्रधानता अपेक्षित है।
6. वाक्य छोटे और आपस में जुड़े होने चाहिए।
7. भाषा सरल और सार्थक होनी चाहिए।

अध्याय — 2 पत्र लेखन

स्मरणीय बिन्दु

हर्ष, शोक, सूचना, समाचार, प्रार्थना और स्वीकृति आदि के भावों को लेकर कागज़ पर लिखी किसी अधिकारी, स्वजन या सामान्य जन को सम्बोधित वाक्यावली को पत्र कहते हैं।

पत्र-लेखन एक आवश्यक कौशल है। अपने विचारों एवं भावों की अभिव्यक्ति के लिए पत्र-लेखन का प्रयोग किया जाता है। अपने सगे-संबंधियों, पदाधिकारियों, मित्रों, संपादकों आदि से लिखित भाव सम्प्रेषण के माध्यम से जुड़ने की कला पत्र लेखन कहलाती है। पत्र लेखन हमारे जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग है, जो लोगों को समाज से जोड़कर रखता है। यद्यपि आज मोबाइल युग में पत्रों का आदान-प्रदान न के बराबर हो गया है किंतु फिर भी अनेक ऐसे कार्य हैं जो पत्राचार के बिना नहीं हो सकते।

पत्र के प्रकार—

पत्र के सामान्यत: दो प्रकार होते हैं—

(1) औपचारिक पत्र

(2) अनौपचारिक-पत्र

1. औपचारिक पत्र—औपचारिक पत्र-व्यवहार उन व्यक्तियों के साथ किया जाता है, जिनके साथ पत्र लेखक का कोई निजी या पारिवारिक संबंध नहीं होता। ऐसे पत्रों में व्यक्तिगत रुचि की बातें न लिखकर सिर्फ़ काम की बातें लिखी जाती हैं तथा मुख्यत: सूचनाओं और तथ्यों पर ध्यान दिया जाता है। भाषा पूर्णत: औपचारिक होती है।

2. अनौपचारिक-पत्र—सगे-संबंधियों, मित्रों, रिश्तेदारों, परिचितों आदि को लिखे गए पत्र 'अनौपचारिक पत्र' कहलाते हैं। इन्हें व्यक्तिगत पत्र भी कहा जाता है। इस प्रकार के पत्रों में व्यक्ति के सुख-दु:ख, हर्ष, उत्साह आदि का वर्णन किया जाता है। अनौपचारिक पत्रों की भाषा आत्मीय व हृदय को स्पर्श करने वाली होती है।

पत्र-लेखन की सामान्य विशेषताएँ—

1. पत्र लिखते समय लिखने वाले तथा पत्र प्राप्त करने वाले का नाम व पता लिखना चाहिए।
2. पत्र का विषय स्पष्ट होना चाहिए तथा अनावश्यक बातों को पत्र में नहीं लिखना चाहिए।
3. पत्र लिखते समय क्रमबद्धता पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
4. पत्र का आकार संक्षिप्त होना चाहिए तथा विषय के अनुकूल होना चाहिए। कम शब्दों में अधिक बात कहने की कोशिश करनी चाहिए।
5. पत्र की भाषा सरल, सामान्य, विनम्र, आदर सूचक एवं शुद्ध होनी चाहिए।
6. पत्र अधूरा नहीं होना चाहिए अर्थात् पत्र को इस प्रकार समाप्त किया जाना चाहिए कि पत्र का संदेश स्पष्ट हो सके।
7. पत्र में अधिक काट-छाँट नहीं होनी चाहिए।

अध्याय — 3 स्ववृत्त लेखन

स्मरणीय बिन्दु

एक स्ववृत्त की तुलना हम उम्मीदवार के दूत या प्रतिनिधि से कर सकते हैं। जिस प्रकार एक अच्छा दूत या प्रतिनिधि अपने स्वामी का एक सुंदर और आकर्षक चित्र प्रस्तुत करता है, उसी प्रकार एक अच्छा स्ववृत्त नियुक्तिकर्ता के मन में उम्मीदवार के प्रति अच्छी और सकारात्मक धारणा उत्पन्न करता है। एक अच्छा स्ववृत्त किसी चुम्बक की तरह होता है जो नियुक्तिकर्त्ता को आकर्षित कर लेता है। नौकरी में सफलता के लिए योग्यता और व्यक्ति के साथ-साथ स्ववृत्त निर्माण की कला में निपुणता भी आवश्यक है।

स्ववृत्त लेखन की विशेषताएँ—

1. स्ववृत्त एक विशेष प्रकार का लेखन है, जिसमें व्यक्ति विशेष के बारे में किसी विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखकर सिलसिलेवार ढंग से सूचनाएँ संकलित की जाती हैं।
2. गागर में सागर भरना।
3. पहले पक्ष में वह व्यक्ति है जिसको केन्द्र में रखकर सूचनाएँ संकलित की गई होती हैं। दूसरा पक्ष उस व्यक्ति या संस्था का है जिसके लिए या जिसके प्रयोजन को ध्यान में रखकर सूचनाएँ जुटाई जाती हैं।
4. पहला पक्ष है उम्मीदवार और दूसरा पक्ष नियोक्ता।
5. स्ववृत्त में वही सूचनाएँ डाली जा सकती हैं जिनमें दूसरे पक्ष यानी नियोक्ता की दिलचस्पी हो।

स्ववृत्त का रूप-आकार— स्ववृत्त में ईमानदारी होनी चाहिए। किसी भी प्रकार के झूठे दावे या अतिशयोक्ति से बचना चाहिए। नियोक्ता को उम्मीदवारों के चयन का अच्छा खासा अनुभव होता है। गलत या बढ़ा-चढ़ा कर किए गए दावों से उन्हें धोखा देने की कोशिश खतरनाक बन सकती है। स्ववृत्त में आलंकारिक भाषा की गुंजाइश नहीं है, इसीलिए इसकी शैली-सरल सीधी, सटीक और साफ़ होनी चाहिए ताकि पढ़ने वाले को सारी बातें एक ही नज़र में स्पष्ट हो जाएँ और अर्थ निकालने के लिए दिमाग पर ज़ोर न डालना पड़े।

स्ववृत्त न तो जरूरत से अधिक लम्बा हो न ही ज्यादा छोटा। अगर बहुत संक्षिप्त हुआ तो इसमें अनेक जरूरी चीज़ें आने से रह जाएँगी। दूसरी ओर यदि बहुत लम्बा हुआ तो पढ़ने वाला अनेक पहलुओं को नज़रअंदाज़ कर सकता है। स्ववृत्त दो-तीन पृष्ठों से अधिक लम्बा नहीं होना चाहिए।

विविध सूचनाओं का ब्यौरा—

स्ववृत्त व्यक्ति विशेष के बारे में सूचनाओं का सिलसिलेवार संकलन है। स्ववृत्त सूचनाओं का एक अनुशासित प्रवाह है। यानी इसमें प्रवाह और अनुशासन दोनों ही होने चाहिए। प्रवाह व्यक्ति परिचय से प्रारम्भ होता है और शैक्षणिक योग्यता, अनुभव, प्रशिक्षण, उपलब्धियाँ, कार्येतर गतिविधियाँ इत्यादि पड़ावों को पार करता हुआ अपनी पूर्णता प्राप्त करता है। व्यक्ति परिचय के अन्तर्गत उम्मीदवार का नाम, जन्मतिथि, उम्र, पत्र व्यवहार का पता, टेलीफोन नम्बर, ई-मेल का पता आदि सूचनाएँ दी जाती हैं। शैक्षणिक योग्यताओं से सम्बंधित सूचनाएँ एक सारणी के रूप में प्रस्तुत की जानी चाहिए जिनमें प्राप्त डिप्लोमा या डिग्री का विवरण, स्कूल या कॉलेज का नाम, बोर्ड या विश्वविद्यालय का नाम, संबंधित परीक्षा का वर्ष, परीक्षा के विषय, प्राप्तांक प्रतिशत और श्रेणी का उल्लेख होना चाहिए।

अध्याय — 4 ई-मेल लेखन

प्रस्तावना

ई-मेल या इलेक्ट्रॉनिक मेल, इन्टरनेट के माध्यम से पत्र भेजने का एक तरीका है। मेल शब्द का अर्थ होता है संदेश, अर्थात् इससे हम यह समझ सकते हैं कि यह एक प्रकार की चिट्ठी या संदेश होता है, जब इस संदेश या चिट्ठी को इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से भेजा जाता है तो उसे ई-मेल (e-mail) कहते हैं। ई-मेल के द्वारा हम विश्व के किसी भी कोने में बैठे इंसान तक सिर्फ़ कुछ सेकण्ड में ही अपना संदेश भेज सकते हैं और अन्य इंसान द्वारा भेजा संदेश इलेक्ट्रॉनिक रूप में पा सकते हैं।

ई-मेल के साथ हम अन्य फाइलें जैसे—फोटो या डॉक्युमेन्ट्स भी जोड़कर भेज सकते हैं।

अध्याय — 5 विज्ञापन लेखन

स्मरणीय बिन्दु

वि (विशेष) + ज्ञापन (जानकारी देना) अर्थात् किसी के बारे में विशेष रूप से जानकारी देना ही विज्ञापन है।

आज का युग विज्ञापनों का युग है। रेडियो, दूरदर्शन, समाचार- पत्र तथा पत्रिकाएँ आदि इसके मुख्य साधन हैं। विज्ञापन एक कला है और इसके माध्यम से उत्पादक अपने सामान की गुणवत्ता, सूचना, जानकारी और प्रसिद्धि को जन-जन तक पहुँचाता है। आज तो अधिकतर व्यापार विज्ञापनों द्वारा चलते हैं। विज्ञापनों के लिए कंप्यूटर की सहायता से बड़े ही आकर्षक डिजाइन बनाए जाते हैं। विज्ञापनों का हमारे लिए उपयोग और महत्त्व है।

विज्ञापन लिखते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए-

- विज्ञापन 60 शब्दों में लिखना चाहिए।
- विज्ञापन का आरंभ सीधा विषय से होना चाहिए।
- वाक्य छोटे-छोटे तथा आपस में जुड़े होने चाहिए।
- भाषा सरल तथा सार्थक होनी चाहिए। विज्ञापनों की भाषा में तुकांत / तुकबंदी वाले शब्दों का प्रयोग करने से विज्ञापन रोचक और प्रभावी हो जाता है।
- अभ्यास तथा प्रयास से विज्ञापन लेखन में कुशलता प्राप्त की जा सकती है।

अध्याय — 6 संदेश लेखन

स्मरणीय बिन्दु

किसी व्यक्ति विशेष या समूह द्वारा किसी व्यक्ति को या समूह को दिए जाने वाला सुखद-दु:खद समाचार ही संदेश कहलाता है, परन्तु अब समय के साथ इसका रूप बदल गया है।

संदेश हम कई प्रकार से दे सकते हैं—

1. देश या राष्ट्र के नाम संदेश।
2. शुभकामना संदेश।
3. पर्व या त्योहारों पर संदेश।

OSWAAL BOOKS® LEARNING MADE SIMPLE